ISSN 2455 – 4502

नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति

त्रैमासिक ई–पत्रिका

वर्ष : 2, अंक : 2

निमित्त

निमित्तमात्रं भव!

विश्वविद्यालय परिसर की रचनात्मक अभिव्यक्ति का समवेत प्रयास

ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

गांधी हिल्स, वर्धा – 442 001 (महाराष्ट्र)

नैक द्वारा 'A' ग्रेड प्राप्त

संरक्षक

प्रो. गिरीश्वर मिश्र

कुलपति

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

वर्धा-442001 (महाराष्ट्र)

परामर्श

प्रो. आनंद वर्धन शर्मा

प्रतिकुलपति

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा-442001 (महाराष्ट्र)

संयोजन-संपादन

डॉ. शंभू जोशी

सहायक प्रोफेसर

श्री गिरीश चंद्र पाण्डेय

प्रभारी, लीला

रचना भेजने का पता - nimitta@hindivishwa.org

आवरण एवं साज-सज्जा

श्री राजेश आगरकर

सहायक, प्रकाशन विभाग

© संबंधित लेखकों एवं रचनाकारों द्वारा सुरक्षित

प्रकाशक

कुलसचिव

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा- 442001 (महाराष्ट्र)

नोट- प्रकाशित रचनाओं की रीति-नीति या विचारों से महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा या संयोजक-संपादकों की सहमति अनिवार्य नहीं है।

ISSN 2455 – 4502

अनुक्रम

विरासत

निबंध

- सूना – भगवतशरण उपाध्याय 04
- धर्म और पाप – आचार्य चतुरसेन शास्त्री 09

आलेख

- हिंदी के अंतरराष्ट्रीयकरण का रास्ता कैसा होगा – चाओ वाई 13
- पर्दे का अभिनेता बनाम पर्दे के बाहर का इंसान
  व्यक्ति विशेष नाना पाटेकर – मनीष कुमार जैसल 14
- चीनी सद्भावना प्रतिनिधि मण्डल का वर्धा–सेवाग्राम भ्रमण एवं
  महात्मा गांधी से मुलाकात : एक ऐतिहासिक खोज– अनिर्बाण घोष 17
- सऊदी अरब का संकट और प्रवासी भारतीय श्रमिक–अभिषेक त्रिपाठी 20
- आजादी की जंग में महिलाएँ–अवन्तिका शुक्ला 23

कविता

- मौन–विद्रोह – शिव दत्त 27
- हम् हो हम् हो – श्रीनारायण सिंह 27
- वह सुरा फिर से पीऊँगा – कृष्ण मोहन 28
- उम्र भर जलता रहूँगा – कृष्ण मोहन 28
- मैं सांझ हूँ – अरविन्द कुमार 29

पुस्तक समीक्षा

- पुस्तक एक पूरा कैनवास खड़ा करती है – डॉ. डी.एन. प्रसाद 30
- साँस–साँस जिन्दगी – लक्ष्मी पाण्डेय 31

सूना

भगवतशरण उपाध्याय

सूना, भयानक सूना, जैसे विश्व सिमटकर इन चट्टानों की सीमाओं में आ गया हो, और उनमें मैं अकेला हूँ। जैसे अँधेरा होता है, घुप अँधेरा, वैसा ही यह सूना है। एक पत्ता नहीं, जो हिले, खड़खड़ाए, और गति का, जीवन का बोध हो। प्रकृति सूने में व्यभिचार नहीं उत्पन्न करना चाहती, इससे गोलाम्बर के नीचे, क्षितिज तक सूना है। एक परिन्दा नहीं, चिड़िया का पूत नहीं, शायद हवा तक नहीं।

सालों, दशकों के सपने सही करने आया था। मित्र ने समान मित्र से कहा था, ''बस, आपका काम उन्हें गिरफ्तार कर लाना है, मेरा उन्हें कैद में डाल देना।'' और मेरे उस प्यारे दोस्त ने मुझे उस खुली कैद में डाल ही दिया। काम बन्द, इस बड़े नगर में अनजाने देश में दोस्तों के अभाव में मिलना बन्द। गेस्ट–हाउस के ये लगातार चले गए ठोस–बड़े–गहरे–ऊँचे कमरे, जिनकी फर्श पत्थर की पट्टियों से ढकी, छत पत्थर की पट्टियों से ढकी, जोगिया रंग से रँगी मोटी दीवारें प्रभावतः जैसे जैसे पत्थर की पट्टियों से ढकी। और ये कमरे, कुर्सियों, आराम–कुर्सियों, मेजों, छपरखटों, पलंगों, दरियों, गलीचों–गद्दियों से भरे, छतों से झाड़–फानूस लटकाए, और इन सब में अकेला मैं, फकत मैं, इन सारे कमरों में मैं अकेला। वसन्त निपट गया। पतझड़ आया। मार्च अप्रैल में खोया, पर अप्रैल एक डग न सरके, जैसे अभिशप्त मन्त्रजड़ सर्प।

सूने से दिन में डर लगने लगा। हाँ, लग सकता है डर दिन के सूने में भी, लगता है, लगने लगा था। लगता जैसे कुर्सियों पर कोई बैठ उठेगा, जैसे उनकी जड़ता सचेत हो उठेगी। और यह पलंग जिस पर सोता हूँ, दिन में पड़ा रहता हूँ, बेबस। और चुपचाप इसके ऊँचे सिरहाने–पैताने पर नजर डालता हूँ, बेचैनी में कभी पैताने सिर करता हूँ, कभी सिरहाने। पर वह डर जैसे घेरे–घेरे रहता है। ऊँचाई दोनों ओर की बराबर है, काले आबनूस की चिकनाहट स्याही के साथ अपना डरावना साया डाल देती है। लगता है, पलंग पर नहीं, ताबूत में सोया हूँ। आबनूसी ठोस सपाट सिरहाना–पैताना ताबूत का ही असर पैदा करते हैं। तूतनखामन जैसे जिन्दा पड़ा है, जिन्दा दरगोर, इस स्याही–पुते पलंग की गहरी चहारदीवारी में कैद, जिसकी ऊँची छत को आबनूस के ही खम्भे उठाए हुए हैं। काहिरा के अजायबघर की सहसा याद आ जाती है, उस ठोस सोने, ठोस लकड़ी के कमरानुमा ताबूत की, और तूतेनखामेन की 'ममी' पर उसकी सोलह साल की प्यारी सुन्दर बीबी के छोड़े हार की, जिसके फूल कुम्हला गये थे। और यहाँ भी तो सामने उस तसवीर पर एक गजरा पड़ा है, जिसके फूल कुम्हला गए हैं, विवर्ण हो गए हैं।

और ये झाड़–फानूस, बेशकीमती झाड़–फानूस, जो एक गुजरी हुई दुनिया की याद दिलाते हैं। उस दुनिया के अँधेरे को इनकी हजार–हजार शमाएँ भी दूर न कर पाती थीं। पर जिन पर परिन्दे टूटते थे, शेर–गजलें–रुबाइयाँ पढ़ते थे। पर आज ये झाड़–फानूस भी जैसे मजार के सिंगार हो गये हैं, बुझे चिराग की लौ, अपनी बेबसी के शिकार। काश, उनके पैर होते! फिर इन कमरों के जंगल, कुर्सियों फूलदार मेजों के जाले भी उन्हें नहीं रोक पाते। झमझम करते उन्हें तोड़ते, खुद टूटते, चले जाते, इस कैद से दूर, जहाँ उन्हें कोई नहीं जानता, कोई न समझ पाता, उनके असमय की लँगड़ी रौनक पर जहाँ कोई मुसकराता नहीं।

और उन्हीं की तरह मैं भी कहीं नहीं जा पाता। इन्हीं कमरों की कतार में, जिस पर मैं भी जैसे बेबस टँक गया हूँ, छपरखट के ताबूत की गहराइयों में, और लगता है, उसी में दबा रहूँगा, कयामत तक। फिर यह कयामत भी कुछ आज नहीं आने वाली है! कोई शोख अँगड़ा भी नहीं पड़ता कि जिस्म की सारी रगें खिंच जाएँ, कि ताबूतों में सदियों से पड़े तूतेनखामेन करवट ले लें, कि कब्रों की उभरी छाती दरक जाए।

दिन का साया साँझ के धुँधलके में खो जाता है। फिर साँय–साँय करती रात आती है, रात, चोर और चाँद लिये। चाँद कम ही आता है, चोर अधिक। रग–रग की सीवन में अँगड़ा कर सीवन जैसे तोड़ देता है, घाव हरे हो आते हैं। यादें बिसूरने लगती हैं। रात कटती नहीं। उल्लू पुकार उठता है। कुर्सियाँ, मेजें, पलंग जैसे जी उठते हैं। लगता है, उनमें कोई बैठा है, हर–एक में छायाएँ जैसे चलने लगती हैं। ताबूतों से भरा पिरामिड विकराल स्वर से रो उठता है।

बत्ती जलाता हूँ, सभी आधार बदस्तूर हैं, कुर्सी, पलंग खाली, सूने। बत्ती बुझा लेता हूँ, दिल को हाथो में भर कर कोई मसल देता है। जिस्म का रोआँ–रोआँ खड़ा है। अपनी ही

साँस तूफ़ान भर लेती है। अकेली साँस, हवा का साजिश–भरा फितूर, ग्यारहों प्रान लिए फुस–फुसाती है। आँखें बन्द कर लेता हूँ, गोया अँधेरे में कुछ दीखता था, जो अब न दिखेगा।

और बेरौनक दिन निकल आता है, दिन, जिसकी सुबह तक जलाती है, जिस सुबह की किरन चमकते तीर की तरह आँखों को चीरती चली जाती है। जलती दुपहरी,यद्यपि इतनी नहीं जितनी हिंदुस्तान की। यह दकन है, हैदराबाद, जिसकी आसफजाही दुनिया गो आज बेरौनक है, कभी सूरज पर थूकती थी।

दुपहरी साँय–साँय, आधी रात–सी। पास के कमरे में एक कलाकार दो दिन से आ ठहरे हैं। साथ ही उनके कलावन्ती बीबी भी हैं। कभी–कभी महल के उन बच्चों की हँसी हवा के साथ इधर उड़ आती है, जो उनके पास आ जाते हैं। जब–तब–कुछ टख–टख की आवाज आती है, कैरम की मारी गयी गोट की आवाज–सी, और जब–तब कुछ खस–खसी आवाज, जब शायद कलावन्त–कलावन्ती नए चित्र बनाने के लिए रंग फेटने लगते हैं। साथ ही मेरे मानस–चित्र भी बनने–बिगड़ने लगते हैं। कमरे के एकाकीपन से ऊब कर ऊपर चला जाता हूँ, छत पर। छत लम्बी है, बेइन्तहा लम्बी। सूना जैसे बिखर जाता है, क्योंकि वह कमरे का सूनापन नहीं है, दीवारों से बँधा–बँधा। पर है यह भी बँधा–ही–बँधा, गो इसकी दीवारें दूर के क्षितिज तक फैली हैं।

दाहिने वह अकेली सूखी पहाड़ी, जो दिन में सूरज की चमक लौटा कर मारती है, जिसके डर से कमरे की खिड़कियाँ दिन में बराबर बन्द रखता हूँ। वह अकेली पहाड़ी, जिसकी चोटी पर नीम गंगा खड़ा है। सामने बंजारा–हिल की पहाड़ियाँ बगैर सिलसिले के टूटती–बिखरती चली गई हैं। दूर तक बियाबाँ फैला है। प्रकृति जैसे मुर्दा हो गई है, निर्जीव। यह पास सामने किसी का बनता हुआ ऊँचा मकान है, मकबरे–सा सिर उठाता ही चला जा रहा है। रोज देखता हूँ, एक ईंट ऊपर चढ़ जाती है, आसमान की छाती में। किसी ने बताया, जिन्दा मुर्दों का गारा लगा है उसमें, हड्डियों की ईंटें लगी हैं।

दूर सामने चट्टानी ऊँचाई पर, चट्टानी बुनियाद पर भी वह अनेक बुर्जियों–वाली, अनगिनत कँगूरोंवाली इमारत है। उसमें आज दफ्तर भरे हैं, तुर्की पाशाओं की इमारत–सी उस आलीशान मंजिल में। पर हटा दो उसे भी मेरे सामने से। मेरी कैद पर वह हँसती है। मैं उधर से नजर फेर लेता हूँ। फेर कर उसी दाहिनेवाली पहाड़ी पर डालता हूँ, जिस पर ठूँठा नीम नंगा खड़ा है और जिसकी एक दीवार प्रधान मंत्री के निवास, शाहमंजिल की उघाड़ ढकती है।

और फिर बाएँ अनेक–अनेक पेड़ों पर नजर डालता हूँ जो सभी नंगे हैं। विशाल, पर नंगे, पीपल से सेमल तक। पीपल के अनेक दरख्त हैं, पर आज वे सभी बगैर पत्तों के ताज के ठूँठ खड़े हैं। पीपल को अश्वत्थ कहते हैं, सोचता हूँ। शायद कभी उसकी जड़ से, डाल से घोड़े बँधते थे। आज उन पर घंट बँधते हैं, उनकी डालियों से प्रेत झूलते हैं, उनकी छाया में पितर सोते हैं। विकराल ऊँचे पीपल, जो स्वयं भूत–से खड़े हैं, मादरजात नंगे। दी होगी इस पीपल ने गौतम को 'सम्यक् सम्बोधी', मुझे तो यह आक्रान्त करता है, इसकी दूर तक फैली डालियाँ, सब प्रेत की तरह मुझे जैसे दबोच लेती हैं।

सामने की पहाड़ियों की ओर निगाह लौटा लेता हूँ। नंगे पेड़ों से नंगी पहाड़ियों की ओर, नंगी पहाड़ियों से नंगे पेड़ों की ओर। चट्टानों से क्या मोह? पर पत्थर से भी कभी–कभी मोह हो जाता है। किसी ने कभी मुझसे कहा भी था, दर्द–भरी आह के साथ, किसी हसीना ने। नाम भी याद है, पर नाम जबान पर लाना मना है, न लाऊँगा। याद आई जा रही है, जब इस दूर देश में अपनी सूनी कैद में इन चट्टानों को देखता हूँ, पत्थर को प्यार करने लग जाता हूँ। तो उसने कहा था–"देख इस अभागे को, इस मगरूर आलिम को,दुनिया रंग–बिरंगे महकते फूलों से आबाद है, मह–मह कर रही है, और यह बुतों से इश्क करता है। यह कम्बख्त बुतपरस्त।"

आह, मेरी हसीन जालिम बुतशिकन! काश, तुम्हारे नाम का तारा टूट न गया होता! तुम अपनी टहनी पर होती और मैं अपनी इस कैद से लाचार न होता! पर तब कैद की लाचारी आड़े न आती। पत्थर की दीवारों को मैं तब तोड़ देता, पत्थर को प्यार न कर लौट पड़ता चमन की ओर, उन टहनियों की ओर, जिनकी बुलन्दी में वह मस्त टहनी नाचती होती, जिस पर तुम खिली थीं।

पर क्या पत्थर से, बुत से प्यार करना प्यार करना नहीं है? और मेरा मन इस हैदराबादी दुनिया से उचट पड़ता है, इसके सागरों–सरोवरों को लाँघ, जंगलों–पहाड़ों को लाँघ, मिस्र की ओर लपक जाता है, जहाँ की रेत में नील सात धारों में सोती है, जहाँ के मुर्दों के मुल्क में क्लियोपात्रा ने अपना अमर लोक बसाया था। कहाँ जा पहुँचा दिमाग? खाली सूनेपन को वही भरता जा रहा है। इसलिए क्लियोपात्रा। और क्लियोपात्रा क्यों? क्लियोपात्रा तो साधन–सहारा–मात्र थी। बात तो पत्थर की थी।

हाँ तो, पत्थर से प्यार की। और क्या पत्थर से कोई प्यार नहीं करता, जब नाजुक दिल संगमरमर बन जाता है? पर वह तो उत्प्रेक्षा की बात है। उसकी जाने दो, उसकी सुनो, उस मनचले ग्रीक की,जिसे बेआबरू कर दिया था। वह

इतिहास की बात है, रोमांचक इतिहास की। क्लियोपात्रा ने, एक के बाद एक, रोमन जनरल को अपने रूप–जाल में डाल भोगा था, पाम्पे को दस बरस की आयु में, सीजर को बारह की आयु में। और अब यह अन्तोनी था, हमउम्र बाँका दिलेर अन्तोनी, जिसकी खुली छाती में उसने अपनी नुकीली ठुड्डी की चोट की थी। खुशी में ऐलान किया था – "कोई प्यार को ठुकरा नहीं सकता, न पशु, न मानव, न जड़, न चेतन।" और उस तरुण ने अफ्रोदोती की मूरत को बेआबरू कर दिया!

फिर क्यों सोचता हूँ उस क्लियोपात्रा को? क्यों उसके जार को? क्योंकि तनहाई है, सूनापन है, जिसे भरना है और जिसे दूर नहीं कर पाता। और घने जाता हूँ। मन बेबस है, उड़ा जा रहा है सिकन्दरिया के उन महलों में, जहाँ से अन्तोनी अभी–अभी घोड़े पर उड़ गया है। पूछती है दासी से, "कैसे जा रहा है?"दासी कहती है, "उड़ा जा रहा है घोड़े पर।" फिर रानी जैसे शेक्सपियर उगल पड़ती है – "हैपी द हार्स टु बेयर द वेट ऑव ऐन्टनी।" कितना फूहड़, पर कितना पुरअसर, कितना सही।

रोम और सिकन्दरिया। सीजर और क्लियोपात्रा। क्लियोपात्रा रोम में। सीजर के 'विला' में। डायरी लिखती है – 'रोम मुझ जादूगरनी रानी को देखने उमड़ पड़ा है। यह कौन है? चित्रा। यह दूसरा? कैसियस। और ये कतार में आखिरी? ओक्तेवियस और उसका साथी अग्रिप्पा। ओक्तेवियस के चेहरे पर घृणा है, अग्रिप्पा अपनी गिद्ध की–सी आँखें मेरी छाती के उभार में घुमाए जा रहा है। जी चाहता है, कह दूँ, छेद दे, औरत की शक्ल के मर्द, मेरी छाती, पर मुझे मजबूर न कर।" क्लियोपात्रा डायरी में लिखती जाती है – वरना कह दूँगी, तेरे करम, कि तू इस अपने साथी के साथ सोता है, इस ओक्तेवियस के साथ, जैसे अन्तोनी सीजर के साथ सोया, जैसे सीजर बिथूनिया के साथ सोया, जैसे सिसेरो ग्राचस के साथ सोया, और कि गुलाम स्पार्ता–कस की चोट अभी तुम्हारी पीठों पर है। "पर यह क्लियोपात्रा की डायरी की बात है, चाहे उस ओक्तेवियस के सम्बन्ध की ही क्यों न हो, जो बाद में ओगस्तस बना, चाहे उस अग्रिप्पा के सम्बन्ध की ही क्यों न हो, जो बाद में विश्वविजयी बना।

और वह दूर पहाड़ियों के पीछे सूरज यकायक डूब जाता है। उसका बिखेरा सोना क्षितिज को रंग देता है। मैं अभी देख रहा हूं उधर ही। उस रासेलस की तरह जिसकी कहानी डाक्टर जानसन ने लिखी है। बहुत दिनों पहले पढ़ी थी। सही–सही याद भी नहीं है, शायद रासेलस ही नाम था, शायद वह अबीसीनिया का शाहजादा था, पत्थर की दीवारों के पीछे कैद था, जैसे मैं भी आज कैद हूँ। उस रासेलस की याद बहुत आती है। बास्तिल के उस कैदी की भी, जो क्रान्ति के बाद जेल में लाए जाने पर अन्धा हो गया था। आँखें फाड़–फाड़ जब–तब मैं भी देख लिया करता हूँ, दुरुस्त तो हैं आँखें, कहीं मैं भी तो अन्धा नहीं हो गया।

अँधेरा छा आता है। सीढ़ियों के नीचे उतर जाता हूँ। अँधेरा है। सम्हलकर उतरता हूँ, कहीं चूक न हो जाए। खाना आ जाता है। नौकर खड़ा है। खा लेता हूँ। कुछ बोलता नहीं भरसक, गो वही जीवन का एहसास कराता है। केवल कभी–कभी अनावश्यक पूछ लेता हूँ – "दिन कौन है?" जिससे जान लूँ कि जबान अपना काम अभी करती है, आवाज मरी नहीं, कान सुन लेते हैं। कुछ जानकारी के लिए नहीं, क्योंकि एक दिन दूसरे दिन से भिन्न अर्थ नहीं रखता, क्योंकि आज और हजार साल पहले की तारीखों में अब कोई भेद न रहा।

गजब की मायूसी है। दिल बैठा जाता है। मनोरथ मिट गये हैं, चेतना मूढ़ हो चली है, कल्पना का रथ चूर–चूर है।

000

इस मायूसी को रोकना होगा। मायूसी भी ऐसी नहीं कि आस को पलने दे। मुरझाई आस पनप उठती है, जैसे मुरझाई पौध। जिन्दगी मौत की है जरूर, पर मरना भी कुछ आसान नहीं। जिन्दगी जीकर रहती है मौत के डंक और जहर के बावजूद। मायूसी को जीतना होगा।

उसी तरह जिस तरह नीचे सूखे बाग के उस कोने में चम्पा ने सुखानेवाली गर्म लू को जीता है, जिसकी जीने की मस्ती से मौत को इस अप्रैल में पाला मार गया है। सूखे और गरमी के आलम ने पीपल और पाकड़ को बेपर्द कर दिया है, पर चम्पा सदा की तरह आज भी नौबहार के हरे राज में खड़ा है। उसकी हरी पत्तियों के घने छत्र में लाल कलियाँ चिटख रही हैं, उसके गहरे सुर्ख फूल पंजे की झुकी उँगलियों की तरह जिस्म को काँटा बनाए हुए हैं, जिससे गर्मी उनका दामन नहीं छू पाती, जैसे उनकी तेज महक रस चूसनेवाले शोषक भौंरे को पास नहीं फटकने देती। उसके छत्र के नीचे तरी सिमटकर जैसे आ बैठी है।

पीपल–सेमल को जैसे फालिज मार गया, पर यह चम्पा आज भी सरस है, मायूसी से दूर, मौत से दूर मौत की ही तरह जिन्दगी की छूत भी है, उससे भी अधिक संक्रामक। सोते से निकली एक पतली अकिंचन धारा चट्टानों की रुकावट पर सात–सात धाराओं में उबल पड़ती है। हजार धाराओं में फूटकर बह चलती है, उद्दाम अविकल धारा, जीवन का नाम सार्थक करती, सूखे को हरा करती, मुरझाए में प्रान भरती। मादक मायूसी दूर करनी होगी। चिट्ठियों से मेज ढकी है। चिट्ठियाँ, जो शक्ति और प्रेरणा के लिए आई हैं। उस लड़की की चिट्ठी, जो हजार मुसीबतों में गुरबत के साए से उठ, मौत से लड़कर जीत चुकी है और लड़खड़ाते पैरों मायूसी

से लड़ रही है। और उस साहित्यकार की जिसका फौलादी जिस्म संघर्ष से कमजोर पड़ गया है, पर जिसकी कलम धुँआधार चल रही है और चलती जाएगी, जब तक वह सारा, जिसने ईमानवालों को बेगैरत कर दिया है, उसकी नोक के नीचे सिमट कर चलनी न हो जाए। फिर उस गरीब की, जिसका खींसें निपोर कर लोकप्रिय बनने वाला अफसर अपने सुलूक की तेज सुइयों से उसके मर्म को छेद रहा है। जानता हूँ, ऐसे अफसर को, जो अपने अफसरों के सामने भीगी बिल्ली बन जाते हैं, अपने मातहतों के सामने गुर्राते भेड़िए। पर यह सारे अलग–अलग नहीं, एक ही साबुत शक्ल के अनेक–अनेक चेहरे हैं, मुसल्लम के अनगिनत टुकड़े।

तुम अकेले नहीं हो, तुम्हारा मायूस होना इन्सानियत के प्रति कृतघ्नता है, चाहे तुम कैद में ही क्यों न हो। याद आती है कवि की पंक्ति – "तुमने बहुत सहा जीवन में, लेकिन और सहो।" सहना होगा, मानवता के प्रति कृतज्ञ होकर, उसकी रक्षा का पहरुआ बनकर।

और सहसा जैसे जमाना बदल जाता है। क्लियोपात्रा की विलासिता की याद नहीं आती, उस गुलाम की आती है, हेरास की। आक्तेवियस के साथ अन्तोनी मेडिटरेनियन में लड़ रहा है। उसकी प्रेयसी के सैकड़ों नीले पालों वाले जहाज रोम के जहाजों से टकरा रहे हैं। सहसा क्लियोपात्रा का सोया विलास जाग उठता है। उसके खो जाने का डर उसे दहशत से भर देता है। रानी भागती है, उसके जहाज भागते हैं, उसका जार अन्तोनी भागता है। अन्तोनी, वह अजेय सिपाही, जिसकी पीठ यूरोप ने नहीं देखी थी, और ग्लानि–भरा सिपाही घुटनों पर अपनी तलवार तोड़ देता है। गुलाम आता है, सिपाही कहता है – "हेरास, मैंने कभी तुम्हारी जान बचाकर तुम्हें आजाद किया था, आज उसका बदला चुका दो।" नमकहलाल गुलाम की आँखें खुशी से हुक्म बजा लाने के लिए फैल जाती हैं। कान हुक्म सुनने के लिए आतुर हो उठते हैं। वह सुनता है –"हेरास, ले यह खंजर और मेरे जिगर में भोंक मुझे जिन्दगी बख्श दे।" हेरास चुप है। स्वामी बार–बार इसरार करता है। हेरास मजबूर हो जाता है। कहता है – "अच्छा, मुँह फेर लो, मालिक। वरना तुम्हें मारते तुम्हारे उस खूबसूरत चेहरे को कैसे देख सकूँगा, जिसने मुझे कभी आजाद किया था और जिसके बाल–बाल पर हजार–हजार हेरास कुर्बान हैं? और अपने हाथों को इधर फैला दो, जिन पर तुम्हारा सिर गिरे।" मालिक अंजली फैलाकर मुँह फेर लेता है। आवाज होती 'खप्प'। अन्तोनी के हाथों पर कुछ गिरता है। अन्तोनी सहसा घूम जाता है। गुलाम का धड़ जमीन पर तड़प रहा है, सिर मालिक के हाथों पर मुस्करा रहा है। मानवता के प्रति यह कृतज्ञता है। उसके लिए बन्धन तोड़ना है।

और सामने की पहाड़ियाँ जैसे नजर से ओझल हो उठती हैं। उनके ऊपर घनीभूत धुएँ की तरह एक आवाज उठती आ रही है, उमड़ती घुमड़ती आवाज। उस जुलूस की आवाज, जिसे महादेवसिंह लिए जा रहा है, जो धारा–सभा की ओर बढ़ता जा रहा है। और बाजू में, सामने रिसाला है, चट्टानों–सा खड़ा । 'हाली' (हैदराबादी सिक्के) की बदलती तकदीर मजदूरों की मजूरी से टकरा गई है। मजदूरों का जुलूस बढ़ चलता है। लाठियाँ उठ पड़ती हैं, आँसू–बम फट पड़ते हैं। महादेवसिंह लड़खड़ा कर गिर जाता है। जन–कवि मंजीत की आवाज मजदूरों की आवाज के ऊपर उठ हवा के परों पर चढ़ चलती है। लाठी की चोट से वह गिर जाता है, बेहोश हो जाता है। पर आवाज बुलन्द है, क्योंकि आवाज कभी नहीं मरती। वह हवा के डैनों पर है। सामने पहाड़ियों पर, उनकी बिखरी चोटियों पर वह आवाज धुएँ–सी छाई हुई है। जिंदगी अस्मत के लिए लड़ रही है।

उसी तरह जैसे खून की तरह चम्पा का वह लाल फूल। और मैं छत पर खड़ा उसे देख रहा हूँ। मेरा सूना भर उठता है। मेरी कैद की प्राचीरें गिर जाती हैं। देखता हूँ, छत की मुँडेर को छेद पौध का अकेला, साँस से भी कोमल, पत्ता ललक रहा है। अभी उसकी दालें भी नहीं मरीं और वह जीवित मौत को ललकार रहा है, पत्थर की छाती फोड़कर निकला है। लगता है, कहीं कुछ हो गया है।

दाहिने की पहाड़ी का वह ठूँठ नीम हरा हो चला है। उसके नीचे बकरी अपने नन्हें परिवार को लिए चल रही है, और ढोर के रखवाले ने कान पर हाथ धर, तान छेड़ दी है। अभी हाल रिमझिम हुई थी। मेह के स्पर्श से धरा से सुरभि उठी। पवन उसे तरंगित डैनों पर ले उड़ा। दिगन्त गमक उठा। वसुधा ने अपने खजाने की गाँठें खोल दीं, उसका पोर–पोर सब्ज उगम उठा। नीलाम्बर दूर पहाड़ियों के पीछे, क्षितिज की संधि पर झुका, लजाती धरा को चूम रहा था।

क्या कुछ हो गया? जैसे देवताओं का मौसम जो मौसमी आसारों से अलग है। देवता हँसा कि नन्दन में पराग बरस पड़ा, देवता रोया कि दुर्दिन छा गया। पीपल जो ठूँठ विकराल खड़ा था, प्रेतों का भार लिये, आज गा रहा है। छिन भर में वह हरा हो उठा है। नन्हें–नन्हें करोड़ों पत्ते चाँदी की महीन वरकों की तरह डालों से हिल रहे हैं। अनन्त टहनियाँ लहलहा उठी हैं। पीपल से पीपल पर नजर जाती है, वही राज है, यकसाँ लहलहाते चाँदी के वरक। हरियाली जवानी पर है। जिन्दगी तीर मारती चली गयी है।

मायूसी स्याह चादर फेंक काफूर हो चुकी है, जिन्दगी डालों पर पेंग मार रही है – दरबे के वे अड़ियल कबूतर, उधर अपने नीड़ों से बाहर अजब मस्ती में मचल रहे हैं। कबूतर काम के वाहन हैं, जीवन के प्रतीक। कबूतरी के पीछे उड़

रहा है वह कबूतर। तार–तार पर वह बैठती है, तार–तार वह उसका पीछा करता है, फिर पकड़ लेता है। कबूतरी जैसे हँसकर कबूतर के डैनों की आड़ में आ जाती है। निरालस, जागरूक कबूतर विजय में 'गुटर–गूँ।' कर उठता है, स्नेह–सिक्त कबूतरी अपने कबूतर की गरदन में चोंचें चुभाए जा रही है, चुभाए जा रही है।

परिचय

जन्म : 1910, उजियारपुर, बलिया (उत्तर प्रदेश)
भाषा : हिंदी
विधाएँ :कहानी, रिपोर्ताज, नाटक, निबंध, यात्रावृत्त, बाल साहित्य
मुख्य कृतियाँ : विश्व साहित्य की रूपरेखा, कालिदास का भारत, कादंबरी, ठूँठा आम, लाल चीन, गंगा–गोदावरी, बुद्ध वैभव, साहित्य और कला, सागर की लहरों पर
संपादन : भारतीय व्यक्ति कोश, हिंदी विश्व कोश (चार खंड)
निधन : 12 अगस्त 1982, मॉरीशस
साभार : हिंदी समय डॉट कॉम

धर्म और पाप

आचार्य चतुरसेन शास्त्री

भारत धर्म–प्रधान देश है और मनुष्य पाप का चोर है, इसलिए धर्म और पाप की बिना सहायता लिए मैं मानने वाला आदमी नहीं हूँ। मैं अपनी अंतरात्मा में भली भाँति जानता हूँ कि पाप और धर्म दोनों खातों से भरपूर धन है और उसका कुछ सदुपयोग नहीं हो रहा है। पहले मैं धर्मादाओं की बात कहूँगा। मंदिरों, मस्जिदों और मकबरों की करोड़ो रुपयों की आमदनी है। काशी, वृंदावन, नाथद्वारा के प्रख्यात मंदिर, गोकुलिया संप्रदाय के महंत, अजमेर ख्वाजा की दरगाह और हजारों संस्थाएँ हैं, जहाँ भावुक भक्तों के सोने का मेह बरसता है। बहुतेरे मंदिरों के पीछे जागीरें हैं, गाँव हैं। उस अतुल संपत्ति के स्वामी उनके महंत और पुजारी हैं। इन सबके सिवा गया, प्रयाग आदि तीर्थों के भारी–भारी दान भी कुछ कम श्रेणी की वस्तु नहीं हैं। अच्छा मैं यह पूछता हूँ कि यह धर्म का धन किसी एक व्यक्ति के विलास की वस्तु होने के योग्य है? यह बात छिपी नहीं कि अनेक महंतों के चरित्र राजाओं की तरह निकम्मे और भ्रष्ट हैं। मैं इनके प्रमाण दे सकता हूँ। फिर यह न भी हो तो यह धर्म का पैसा धर्म में लगे। सबसे बड़ा धर्म क्या है–यह सोच लेना चाहिए।

सर्व–साधारण संप्रदायों को धर्म के नाम से पुकारते हैं। भारत धर्म–प्रधान देश है। चिरकाल से यहाँ धर्म का आदर होता आया है–बड़ी–से–बड़ी शक्तियाँ भी धर्म के आगे सिर झुकाती चली आई हैं। यह एक साधारण बात है कि जिस वस्तु की ज्यादा खपत होती है उसकी दुकानें भी बहुत–सी खुल जाती हैं और यह भी स्वाभाविक है कि नकली चीजें बहुत बनने लगती हैं। भारत में धर्म की भी वही दशा है। मंदिरों में, सड़कों पर टके सेर धर्म मिलता है। घर के धनी महाशय जब भोजन नाक तक डाट चुकते हैं और थाली में जो जूठन दाल–भात बचा रहता है, तब कहा जाता है कि यह किसी भूखे को दे दो, धर्म होगा। कपड़े पहनते–पहनते जब नौकरों के भी काम के नहीं रहते तब कहा जाता है किसी नंगे को दे दो, धर्म होगा। इसी भारत के जब दिन थे और भारत में बड़प्पन था तब इसी धर्म के नाम पर राजाओं ने राज्य त्यागकर चांडाल की सेवा की थी, अपना माँस काटकर गिद्ध को खिलाया था, अपने पुत्र के सिर पर आरा चलाया था। वही महादुर्लभ और दुर्धर्ष धर्म इस कलयुग में इतना सस्ता हो गया कि जूठे टुकड़ों और फटे चिथड़ों के एवज चाहे जो उसे मोल ले सकता है। इससे अधिक उपहास और लज्जा की बात क्या होगी? धर्म का प्रश्न बहुत भ्रांत है। श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं 'धर्म क्या है और क्या नहीं है इस विषय में अच्छों–अच्छों की अकल चकरा जाती है।'

लोग धर्म करने काशी–प्रयाग जाते हैं। कोई गया में सिर मुँडाता है। कोई व्रत–उपवास करता है। कोई पशु–बलि देता है। कोई धर्मशाला–मंदिर बनाता है। कोई पूजा–पाठ, जप–तप करता है। अनेकों प्रकार हैं, पर मैं यह कहता हूँ कि यह सब धर्म नहीं है। भूखों को अन्न, प्यासों को जल, नंगों को वस्त्र, रोगी को औषध, असहाय को सहायता देना – यह हमारे मनुष्य–योनि का साधारण कर्तव्य है, यह हम पर सामाजिक कृपा है और उसे अपनी शक्ति भर पालन करके हम किसी पर कुछ अहसान नहीं कर रहे हैं, न वह धर्म ही है।

अच्छा कल्पना कीजिए कि आपने गर्मी में प्याऊ लगवाई है। आप कहते हैं कि वह धर्म है। अब उस प्याऊ पर कोई प्रतिष्ठित पुरुष आकर पानी पीता है तो क्या वह तुम्हारा धर्मादा खाता है? जरा उसके मुँह पर कह देखिए तो मजा आ जाए। मैंने देखा है गर्मी के दिनों में उत्तर प्रदेश के उत्साही सज्जन युवक शीतल पानी से भरे घड़े कंधे पर धर स्टेशन पर फिरते हैं और नम्रता और प्रेम–भरे शब्दों में सब यात्रियों से जल पीने का अनुरोध करते हैं। क्या वह पानी धर्मादे का है?

तब धर्म क्या है? मनुस्मृति कहती है कि धैर्य, क्षमा, दया, अस्तेय, शौच, इंद्रियनिग्रह, बुद्धि, विद्या,अक्रोध, सत्य ये दस धर्म के लक्षण हैं। मैं कहूँगा कि ये भी धर्म के लक्षण नहीं हैं। ये मनुष्यत्व के चिह्न हैं अथवा इन्हें धर्म की ओर ले जाने वाले मार्ग कह सकते हैं – यह वास्तव में धर्म की सच्ची व्याख्या नहीं हुई।

क्या सर्वत्र अहिंसा धर्म है? यदि यही बात है तब मेरे एक प्रश्न का कोई उत्तर दे कि एक सिपाही युद्ध में हजारों मनुष्यों को मारकर भी हत्यारा तथा अधर्मी नहीं कहलाता और मैं चींटी मार देने पर भी हत्यारा और पापी कहा जाऊँगा, यह क्यों ?

फिर तो अपराधी को फाँसी देने वाला जज आदि सभी पापी हो जाएँगे। परंतु नहीं, कारण और अर्थ देखने पर कभी हत्या भी धर्म है और कभी अधर्म।

उसी प्रकार सत्य की बात लीजिए। कल्पना कीजिए कि रात को एक चोर आपकी छाती पर चढ़ बैठा। उसने कहा रख दो जो पास में है, आपके पास जाहिरा दो हजार रुपए थे, पर गुप्त दस हजार रखे थे। आपको सत्य बोलना था, आपने वे दस हजार भी चोर का बता दिए। अब विचारिए कि एक तो वह झूठ था जिसमें असली मालिक को लाभ और चोर की हानि थी और एक वह सत्य है जिसमें चोर को लाभ और मालिक को हानि है। ऐसी दशा में मैं यह पूछता हूँ कि धर्म क्या है? सत्य या झूठ? यदि सत्य धर्म है तो वह धर्म नहीं है जो पापियों को लाभ पहुँचाए और सज्जनों का नाश करे। धर्म के विषय में तो यही कहा गया है कि धर्म सदा पापी का नाश और धर्मात्माओं की रक्षा करता है। ऐसी दशा में झूठ भी धर्म है। तब धर्म का अर्थ क्या हुआ। धर्म किसे कह सकते हैं। ये भी सोचना चाहिए। इसका उत्तर दर्शन शास्त्रों में है। गौतम ऋषि कहते हैं – 'यतो अभ्युदयनिश्रेयस सिद्धिः स धर्म।' जिस काम के करने से अभ्युदय और निश्रेयस की सिद्धि हो वह धर्म है। अब यह देखना है कि अभ्युदय और निश्रेयस के क्या अर्थ हैं।

अभ्युदय का संक्षिप्त किंतु सच्चा अर्थ है ऐहिलौकिक सर्वोच्च सुख और वह सुख यही हो सकता है कि मनुष्यत्व के सामाजिक और व्यक्तिगत अधिकारों की स्वाधीनता और क्षमता की प्राप्ति। निश्रेयस का अर्थ है मोक्ष अर्थात पारलौकिक सर्वोच्च आनंद, जो कि अभ्युदय की पूर्ण प्राप्ति कर जीवन के निर्बंध होने के कारण होगा। जो पुरुष अभ्युदय और निश्रेयस दोनों की समान भाग से प्राप्ति करेगा वही धर्मात्मा कहलाएगा।

एक बात यहाँ ध्यान में रखने की है। संसार के बड़े–बड़े ऋषि हुए, परंतु किसी ने अपने को धर्म–संस्थापक कहने का साहस नहीं किया। वे सत्यवक्ता, धैर्यवान, मनस्वी, दमनशील आदि सब कुछ थे। किंतु कृष्ण ने अपने को निःसंकोच भाव से धर्म–संस्थापक कहकर घोषणा की है। किसलिए? लोग कहते हैं कि ये ईश्वर थे। मैं कहता हूँ नहीं। इसमें ईश्वरत्व की कोई बात नहीं। वे धर्मात्मा थे और धर्म को उन्होंने ठीक समझा था। एक ओर अभ्युदय में वे इतने आदर्श थे कि महाभारत जैसे अमर युद्ध के नेता और जबर्दस्त राष्ट्र–निर्माता, साथ ही इतने मस्त और मौजी कि आनंदकंद की अमर पदवी उन्होंने प्राप्त की। दूसरी ओर ऐसे भारी कि जिनको योगियों ने ध्येय बनाया। यही पुरुष थे जिन्होंने अभ्युदय और निश्रेयस दोनों की प्राप्ति की थी। इसी से ये धर्म–संस्थापक स्वीकार किए गए। वैरागी ऋषि लोग पूरे–पूरे धर्मात्मा नहीं हैं, क्योंकि उनमें इतनी क्षमता न थी कि ऐहिक लौकिक सर्वोच्च सुखों को भोगते–भोगते कृष्ण की तरह निश्रेयस सिद्धि करते। उन्हें विरक्त होना पड़ा। साथ ही वे लोग भी धर्मात्मा नहीं हैं जो संसार के सुखों में डूबकर परलोक का चिंतन नहीं करते।

धर्मात्मा वे हैं जो संसार में रहकर, संसार की यातनाओं का नाश करके, संसार के लिए सुख,कल्याण, शांति और आनंद के मार्ग निर्माण करते हुए साथ ही अपनी आत्मा के कल्याण के लिए मुक्ति के साधन भी ढूँढ़ लेते हैं। यही सच्चा धर्म है जो बहुत गहन, बड़ा दुर्धर्ष और अत्यधिक विषम है।

हम ईश्वर का भय करें, पाप से बचें, स्वार्थ को त्यागें, दया, प्रेम, वीरता और आत्मशक्ति का अभ्यास करें और तब लोक–सुख की चाहना करें, यही सत्य धर्म है।

यह धन का काल है। यहाँ तक धन का महात्म्य बढ़ गया है कि प्राचीन काल में जो राज्य शासन तलवार पर होता था, आज धन पर है। कालिदास ने दिलीप की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि उसकी सेना आदि तो दिखावे की शोभा थी। वास्तव में राज्य–संचालन के योग्य तो उसके पास दो वस्तु थीं – चढ़ा हुआ धनुष और दूसरी तीव्र बुद्धि। आज चढ़ा हुआ धनुष कुछ काम का नहीं है, तीव्र बुद्धि आज भी दरकार है, किंतु चढ़े हुए धनुष के स्थान पर भरा हुआ खजाना चाहिए।

मैं यह कहूँगा जिसमें परोपकार हो वह धर्म है। निःस्वार्थ भाव से त्याग निष्ठा से परिपूर्ण देश–सेवा सबसे बड़ा परोपकार है। मनुष्य अपने दारिद्रय की परवाह न कर देश–सेवा में शक्ति भर धन दें, तब धर्म का पैसा तो वास्तव में उसी की संपत्ति है यह उसे पाई–पाई मिलनी चाहिए।

बड़े–बड़े मंदिरों में लाखों–करोड़ों की संपत्ति और आमदनी है। बड़ी–बड़ी दरगाहों के महंत राजाओं की तरह रहते हैं। मैं यह पूछने का साहस करता हूँ कि धर्म की कमाई के ये लोग स्वाधीन स्वामी बनने का क्या अधिकार रखते हैं। ये देवता के सेवक वीतराग पुरुष होने चाहिए। परंतु अतुल संपत्ति के स्वामी होने के कारण इनमें भयंकर दोष उत्पन्न हो गए हैं। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि इनकी रत्ती–रत्ती संपत्ति और आय इस समय देश के समर्पण होनी चाहिए – ये लोग केवल देवता के भोग का उच्छिष्ट खाने का ही अधिकार रखते हैं।

जब मैं मंदिरों और दरगाहों में जाकर उन लोगों की भक्ति, अंधविश्वास, प्रेम और त्याग देखता हूँ तो मेरी छाती फट जाती है। मैं यह सोच सकता हूँ कि यदि इन महंतों के मन और कर्म महात्मा गांधी के समान लोकोपकार के मार्ग पर हों, तो उनका जीवन सार्थक है। अरबों रुपए के ढेर के साथ–साथ करोड़ों हृदय एक क्षण भर में मन–वचन–कर्म से

देश के चरणों में झुक जाएँ। पर मैं देखता हूँ कि अधिकांश में ये लोग विलासी, मूर्ख, अनाचारी, पाखंडी और स्वार्थी हैं। प्रत्येक मनुष्य का धर्म है कि इनके कब्जे में गई संपत्ति को, जो वास्तव में धर्म की संपत्ति है, धर्म के ऊपर लगानी चाहिए और वह धर्म देश–सेवा और देशोन्नति है। इसके साथ ही मैं पाप–कमाई को भी जोड़ता हूँ। मेरा मतलब ठग, चोर, सट्टेबाज, सूदखोर और वेश्याओं से है। इन भाई–बहनों को यह अधर्मोपार्जित धन रत्ती–रत्ती करके देश के चरणों में देकर अनुपात करके अपनी आत्मा का बोझ इसी मनुष्य जन्म में उतार देना चाहिए। संसार क्षण–भंगुर है और मनुष्य अनाचार से कभी सुखी नहीं हुआ। परोपकार के लिए शरीर की बोटियाँ कटाने में जो आनंद आता है, वह आनंद स्वार्थ के लिए किसी भी भोग को भोगने में नहीं आता है। वीर प्रताप के मंत्री वैश्य भामाशाह ने ऐसी ही आपत्ति के समय अपनी समस्त संपत्ति प्रताप के चरणों में रख दी थी और उसी से मेवाड़ का उद्धार हुआ। उनका नाम अमर रहा – न प्रताप रहे, न भामशाह, न वह संपत्ति।

नेपाल के भूतपूर्व राजा त्रिभुवन ज्यूरिच में रोग–शय्या पर मर गए। उनका शव जब दिल्ली लाया गया,तब पालम हवाई अड्डे पर एक घंटे की गंभीर रस्मों और सैनिक सम्मान के बाद शव को भारतीय हवाई सेना के डकोटा विमान द्वारा काठमांडू के लिए रवाना किया गया। प्रधानमंत्री नेहरू, अन्य केंद्रीय मंत्री,विदेशी राजदूत, उच्च अधिकारी, तीन सेनाओं के प्रधान, नई दिल्ली स्थित नेपाली राजदूत तथा सहस्रों दिल्ली के नागरिकों ने शव को श्रद्धांजलि अर्पित की। दस मिनट के लिए राजकीय सम्मान के लिए रखे हुए शव पर श्री नेहरू ने, राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति की ओर से उपसेना सचिव ने तथा तीनों सेना के प्रधानों ने एवं दिल्ली के मुख्यमंत्री ने फूल चढ़ाए। भारतीय सेना के एक हजार सैनिक हवाई अड्डे पर तैनात थे तथा बैंड और ढोल काले कपड़े से ढके थे। भारतीय सेना के छह जनरलों ने सैनिक सम्मान के साथ शव को वायुयान से उतारकर तोपगाड़ी पर रखा। सैनिकों ने सैनिक ढंग से शव का सम्मान किया। बैंड ने 'मृत्यु गीत' गाया। भारत और नेपाल के झंडे शव पर लपेटे गए। दिल्ली के नागरिकों ने फूल चढ़ाए और अंत में उन्हीं छह जनरलों ने शव को विमान पर चढ़ाकर नेपाल रवाना कर दिया। इस दिन भारत सरकार के सारे कार्यालय बंद रहे और राष्ट्रीय झंडे झुका दिए गए। नेपाल में बागमती नदी के किनारे, पशुपतिनाथ मंदिर के निकट राजा का दाह–संस्कार संपन्न हुआ। दाह–संस्कार को लगभग एक लाख नर–नारियों ने देखा। जब शव नेपाल के हवाई अड्डे पर पहुँचा तब 49तोपों की सलामी दागी गई। शवदाह में भारत, ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका और स्वीडन के सरकारी प्रतिनिधि उपस्थित हुए। राजा की मृत्यु पर शोक प्रदर्शन करने के लिए नेपाल के प्रत्येक पुरुष को उस्तरे से अपना सिर तथा दाढ़ी, मूँछें मुँडानी पड़ीं। नेपाल राज्य के प्रत्येक व्यक्ति को तेरहवीं हो जाने तक निरामिष भोजन करना, चमड़े का जूता नहीं पहनना और किसी प्रकार का उत्सव नहीं करने का नियम पालन करना पड़ा। इस नियम के उल्लंघन का दंड छह माह की जेल थी।

सामंतशाही प्राचीन राजाओं में यह प्रथा रही थी कि राजा के मरते ही दूसरा राजा गद्दी पर बैठ जाता था। भारत के अन्य मित्र देशों में भी ऐसा ही रिवाज था। 'राजा मर गया' 'राजा चिरंजीवी रहे' ये दोनों घोषणाएँ एक साथ ही होती थीं। राजपूतों में ऐसा होता था कि राजा के मरते ही सब राजवर्गी जल्द–से–जल्द नए राजा के कृपा पात्र बनने के लिए राजा को सिसकता ही छोड़ जाते थे। गुजरात के सोलंकी राजा कुमारपाल जिसके प्रताप का दिग्दिगंत में डंका बजता रहा, मृत्यु–शय्या पर अकेला पड़ा –मल–मूत्र और गलित्कुष्ठ के घाव पीपों से भरा हुआ छटपटाता मर गया। उस समय एक भी व्यक्ति उसके पास न था। प्रथा थी कि राजा के मरते ही जब उसका पुत्र या कोई भी उत्तराधिकारी गद्दी पर बैठता था,तब सबसे पहली सूचना उसे दी जाती थी कि एक सैनिक मर गया है, उसके क्रिया–कर्म की राजाज्ञा प्रदान हो। तब नया राजा कहता था – 'उचित सम्मान के साथ उसकी क्रिया की जाए।' राजा न उस मातम में सम्मिलित होता था न शव को देखता था। ऐसा ही इस अवसर पर नेपाल के नए राजा ने किया। मृत राजा के पुत्र और उसकी रानी ने न शोक मनाया, न बाल मुँड़ाए, न शव–दाह में सम्मिलित हुए। यह राज–मर्यादा थी। उसका आंशिक उल्लंघन करके उन्होंने और उनकी रानी ने तेरहवीं तक सादा भोजन करने और चटाई पर सोने का नियम पाला। 'ग्यारहवीं' के दिन उनका समस्त वैयक्तिक सामान एक दक्षिण भारतीय महाराष्ट्रीय ब्राह्मण श्री कृष्णभूता को दे दिया गया, जो इन वस्तुओं के साथ–साथ नेपाल नरेश के भूत को भी अपने ऊपर लेकर बागमती नदी के पार चला गया और पुनः काठमांडू की घाटी में प्रविष्ट नहीं हुआ।

एकादश के दिन, बागमती नदी के तट पर एक विशेष समारोह किया गया और ब्राह्मण की कुटिया में मृत राजा त्रिभुवन के सोने–चांदी के बर्तन सजाए गए, सोफा सेट तथा पलंग पर बहुमूल्य गलीचे आदि बिछाए गए। कुटिया के बाहर नेपाल नरेश के हाथी तथा कई मोटरें खड़ी की गईं और इन सबके बाद ब्राह्मण नेपाल नरेश के कीमती वस्त्र धारण कर आया और उसे स्वीकार किया। उसे उत्तम प्रकार का भोजन, सोन–चाँदी के बर्तनों में कराया गया। उसे 40 हजार नकद तथा राजा का निजी सामान जो 10लाख रुपए का था, दे

दिया गया। ब्राह्मण ने श्राद्ध का दान स्वीकार करते ही ब्राह्मणत्व को छोड़ दिया। उसके बाद उसे वहाँ से भेज दिया गया। प्राचीन परंपरा के अनुसार नेपाली ब्राह्मण निरामिषभोजी होने के कारण पवित्र होते हैं, इसलिए वे श्राद्ध का दान नहीं ले सकते। इसी से इस दक्षिण भारतीय ब्राह्मण को, जो काठमांडू में पुस्तक बेचने का व्यवसाय करता था, श्राद्ध का दान दिया गया।

बहुत दिन हुए, संभवतः यह सन 1910–1911 की या इससे कुछ पहले की बात है कि उन दिनों मैं जयपुर संस्कृति कालेज में पढ़ता था। अवस्था उन्नीस–बीस वर्ष की होगी। तभी जयपुर के राजा माधोसिंह का देहांत हो गया। तभी मैंने देखा कि सिपाहियों के झुंड के साथ नाईयों की टोली बाजार–बाजार, गली–गली घूम रही थी। वे राह चलते लोगों को जबरदस्ती पकड़कर सड़क पर बैठा अत्यंत अपमानपूर्वक उसकी पगड़ी एक ओर फेंक सिर मूँड़ते थे, दाढ़ी–मूँछ साफ कर डालते थे। मेरे अड़ोस–पड़ोस में जो भद्र जन थे उन्होंने स्वेच्छा से सिर मुँड़ाए थे। अजब समाँ था, जिसे देखो सिर मुँड़ाए आ जा रहा था। यह देख मेरा मन विद्रोह से भर उठा। मेरी अवस्था कम थी, दाढ़ी–मूँछें नाम की ही थीं। सिर पर लंबे बाल अवश्य थे, पर उन पर मेरा कुछ ऐसा मोह न था। फिर भी जबरदस्ती सिर मुँड़ाने के क्या माने। परंतु लोगों ने मुझे डरा दिया। बाहर निकलोगे तो जबरदस्ती मूँड़ दिए जाओगे। छिपकर बैठोगे और पुलिस को पता लगा तो पकड़ ले जाएँगे, राजद्रोह में जेल में ठेल देंगे। परंतु ज्यों–ज्यों इस जोर–जुल्म की व्याख्या होती थी, मेरे तरुण रक्त की एक–एक बूँद विद्रोही हो उठती थी। मैंने निश्चय किया, सिर कटाना मंजूर है, पर सिर मुँड़ाना नहीं। मैं दिन भर घर में छिपा बैठा रहा। पकड़ने का भय तो था ही। बहुत लोग घरों से पकड़े जाकर मूँड़े जा रहे थे। मुझे किसी अपरिचित के आने की जरा भी आहट मिलती मैं पाखाने में जा छिपता। अंत में रात आई और मैं किसी तरह घर से बाहर निकलकर अँधेरी रात में जंगल की ओर चल पड़ा। जयपुर के जंगल में। शहरपनाह के बाहर ही शेर लगते थे। सन 10 का जयपुर आज का जयपुर थोड़े ही था। मेरा इरादा अजमेर भाग जाने का था, पर स्टेशन पर पकड़े जाने का भय था। अतः आगे बढ़कर एक छोटे स्टेशन से रेल पकड़ी और 15 दिन बाद जयपुर लौटा। फिर भी डर था। 15 दिन में इतने बड़े बाल कैसे हो गए, किसी ने पूछा तो क्या जवाब दूँगा।

यह हुई आपबीती। अब लोकोक्ति सुनिए। किसी रियासत में गांधर्वसेन मर गए। कुम्हार ने सिर मुँड़ाया तो राजा तक दरबारी मुँड़ाते चले गए। पीछे पता लगा कि वह कुम्हार का गधा था। जीवित जातियाँ वहीं हैं जो आधुनिकता का प्रतिनिधित्व करती हैं; अपने आज के जीवन में जीती हैं। नेपाल वीरों का देश है। भारत की जनता नेपाल की जागृति को आशा और सहानुभूति की नजर से देखती है। नेपाल को चाहिए वह अपने देश की भूमि से सामंतशाही, रूढ़िवाद और एकाधिकार का आमूल विनाश करके स्वाधीन राष्ट्र के रूप में अपना नया रूप प्रकट करे।

नेपाल के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मोहन शमशेर राणा के पिता श्री चंद्रशमशेर राणा से पहले–पहल मेरा परिचय तब हुआ था, जब वे कलकत्ता चिकित्सार्थ आए थे। मैं चिकित्सक की हैसियत से उन्हें देखने गया था। संभवतः ये बातें सन 1923–24 की होंगी। अंग्रेजी अमलदारी थी। उस समय कलकत्ते में नेपाल के उस बूढ़े रोगी प्रधानमंत्री ठाट देखकर क्षणभर के लिए मेरी धमनियों में से खून की गति रुक गई थी। परंतु जब मैंने उसे एक दुखी, बूढ़ा, रोगी और उसके शरीर को घावों से भरा तथा जर्जर देखा तो मेरे ऊपर से उस तेजस्वी राजपुरुष का सब रुआब उतर गया और जब बंदूकों की सलामी की बाढ़ की गड़गड़ाहट में प्रमुख पुरुषों से भरे भवन में दो आदमियों को सहारा ले उसने प्रवेश किया तो भवन का प्रत्येक पुरुष पृथ्वी पर झुक गया। अकेला मैं ही सीधा खड़ा रहा। मेरा यह अभिनय देख झटपट श्री मोहन शमशेर के संकेत से कर्नल चंद्रजंग ने मुझे एक ओर आने का संकेत किया। इसी समय मैंने अकंपित स्वर सुना – हे कोण है? मेरा परिचय पाकर उस वृद्ध राजपुरुष ने नर्म नेत्रों से मेरी ओर देखा और 'आइए' कहकर एकांत कक्ष में चला गया, जहाँ मैंने उसकी शरीर परीक्षा की, कातरवाणी सुनी, दिल खोलकर हँसाया और तब से वह परिवार अंत तक मेरा मित्र रहा। एक यही बात नहीं और भी राजपुरुषों से मेरा संपर्क घनिष्ठ रहा है। सर्वत्र मैंने उन्हें दयनीय और असहाय पाया है। निज के नौकरों की दया पर निर्भर। प्रायः मूर्ख और दुखी। तभी तो उनका युग बीत गया। जनता जाग गई। जन जीवन का नया अध्याय शुरू हुआ।

परिचय

जन्म : 26 अगस्त 1891, बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश)

भाषा : हिंदी **विधाएँ :** उपन्यास कहानी, निबंध

मुख्य कृतियाँ

उपन्यास : वयं रक्षामः, सोना और खून (चार भाग), बगुला के पंख, अपराजिता, राजधर्म, अतीत, वैशाली की नगरवधू, आँधी की नींवें, सोमनाथ, मंदिर की नर्तकी, रक्त की प्यास,आलमगीर, सह्याद्रि की चट्टानें, अमर सिंह, हृदय की परख **कहानी संग्रह :** रजकण, अक्षत

निबंध संग्रह : अंतस्तल, मेरी खाल की हाय, तरलाग्नि

बाल साहित्य : महापुरुषों की झाँकियाँ, हमारा शहर

निधन : 2 फरवरी, 1960 **साभार :** हिंदी समय डॉट कॉम

हिंदी के अंतरराष्ट्रीयकरण का रास्ता कैसा होगा

चीन के अनुभव से

चाओ वाई

आज के समय में विश्व में केवल अंग्रेजी को अंतरराष्ट्रीय भाषा कहा जा सकता है। अगर भविष्य में दूसरी या तीसरी अंतरराष्ट्रीय भाषा निकलेगी, तो वह जरूर हिंदी और चीनी होगी। भाषा का विकास दो रास्तों से हो सकता है एक भाषा की वृद्धि के लिए उसका अध्ययन करना और दूसरा भाषा के फैलाव के लिए इसका प्रचार करना। आज के हिंदी क्षेत्र की स्थिति का विश्लेषण करने पर मुझे लगता है कि जो कार्य हम हिंदी क्षेत्र में काम करने वालों के लिए सबसे अति आवश्यक है, वह हिंदी का अध्ययन नहीं बल्कि इसका प्रचार है।

भारत और चीन तथा उनकी भाषाएं हिंदी और चीनी के बीच काफी समानताएं मौजूद हैं। हिंदी के सामने जो वातावरण होता है वह इस शताब्दी में चीनी के सामने भी रहता है। इसलिए चीनी भाषा को अंतरराष्ट्रीय भाषा बनाने के व्यवहारों के माध्यम से हम अनुभव कर और सीख सकते हैं। वर्ष 2000 के बाद लगभग 15 सालों में चीन ने इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए बहुत कोशिश की है जिनमें सबसे सफल है कन्फ्यूशियस संस्थान की स्थापना करना। इस संस्थान का मुख्यालय राष्ट्रीय चीनी कार्यालय के नाम से बनाकर बीजिंग में रखा गया है। अगर विश्व में कोई व्यक्ति, विश्वविद्यालय, शहर या संगठन अपने देश में एक कन्फ्यूशियस संस्थान खोलना चाहता है, तो वह एक चीनी सहकर्मी, चाहे विश्वविद्यालय, शहर या संगठन ढूंढ़ने के बाद राष्ट्रीय चीनी कार्यालय से अनुमति लेकर संयुक्त रूप से खोल सकता है। इस कार्यालय के अंतर्गत जो संस्थान की व्यवस्था है वह चेन सुपरमार्केट की तरह है। कन्फ्यूशियस संस्थान का नाम इस चेन सुपरमार्केट का ब्रांड बन गया है। दिसंबर 2015 तक राष्ट्रीय चीनी कार्यालय ने विश्व में 500 कन्फ्यूशियस संस्थान तथा 1000 कन्फ्यूशियस क्लास स्थापित कर दिए हैं।

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय इस चेन सुपरमार्केट का सबसे बड़ा वाहक है। मुझे लगता है कि हमें कन्फ्यूशियस संस्थान की तरह हिंदी के संस्थानों (जैसे महात्मा गांधी संस्थान) को स्थापित करने की व्यावहारिक और प्रभावी योजना बनानी चाहिए। मुझे विश्वास है कि सरकार की अनुमति और मदद जरूर मिलेगी क्योंकि आजकल मोदी सरकार भारत के सॉफ्ट पॉवर पर ज्यादा ध्यान दे रही है और भाषा का फैलाव भारत के सॉफ्ट पॉवर के बढ़ने का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

अगर चीन के अनुभव को देखें तो हिंदी को अंतरराष्ट्रीय भाषा बनने के लिए चार कार्रवाई आवश्यक हैः

1. अंतरराष्ट्रीय हिंदी विभाग या विद्यापीठ खोलने होंगे और यहां बी.ए. और एम.ए. की कक्षाएं शुरू कर बड़ी संख्या में विद्यार्थियों को प्रवेश दें। ये विद्यार्थी पहले स्वयं विदेशियों को हिंदी पढ़ाने की तकनीकें सीखें। फिर एम.ए. के दौरान या बाद में विदेश में महात्मा गांधी संस्थान में हिंदी अध्यापक बन जाएं।
2. विदेशियों के लिए विशेष पाठ्यपुस्तकें बनाएं। सबसे पहले हिंदी–अंग्रेजी की पाठ्यपुस्तकें बनाएं,फिर धीरे–धीरे जहां संस्थान खोलें वहां की स्थानीय भाषा में अनुवाद करें।
3. विदेशियों के लिए हिंदी भाषा की परीक्षा हेतु व्यवस्था बनाएं और इस व्यवस्था में तीन या चार स्तर रखें।
4. विदेश में संयुक्त रूप से महात्मा गांधी संस्थान स्थापित करें।

पर्दे का अभिनेता बनाम पर्दे के बाहर का इंसान

(व्यक्ति विशेष नाना पाटेकर)

मनीष कुमार जैसल

व्यक्ति विशेष में नाना पाटेकर को चुनना मेरे लिए कम चुनौती नहीं थी। एक तरफ जहाँ बॉलीवुड की बड़ी हस्तियाँ सिर्फ सिनेमाई अभिनेता के रूप में जाने पहचाने जाते हैं वहीं पर्दे का अभिनेता जब वास्तविक जीवन में भी अभिनेता का काम करे तो यह किसी आश्चर्य से कम नहीं होगा।

महाराष्ट्र के विदर्भ, मराठवाडा के अखबारी पन्नों और टीवी चैनलों को देखे तो पाएंगे कि यहाँ आत्महत्या एक बीमारी की तरह फैल रही हैं। एक ऐसी बीमारी जिसका इलाज तो हमारी सरकारों के पास तो हैं पर वो इन्हें लागू न करने की भी ठान चुकी हैं। हमें यह भी कहने में कोई दिक्कत नहीं हैं कि पाँच साल बाद जब सरकारें बदलती हैं तो इन्ही आत्महत्याओं के निराकरण की बात और वादे कर नेता चुनाव भी जीत लेते हैं।

एक नजर में देखें तो पाते हैं कि राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के मुताबिक साल 2014 में देशभर में 12 हजार किसानों ने आत्महत्या की है, वहीं किसानों के मुद्दों नजर रखने वाली विदर्भ जन आंदोलन समिति के आंकड़ों के मुताबिक 20 मई 2014 से 20 मई 2015 तक विदर्भ में एक हजार से ज्यादा किसानों ने आत्महत्या की है। मामला इतना संवेदनशील होने के बावजूद इस देश के नेता किसानों की आत्महत्या को फैशन का दर्जा देने से भी पीछे नहीं हटते।

नाना पाटेकर

हिन्दी और मराठी दोनों सिनेमा में अपनी अलग संवाद शैली के लिए जाने पहचाने जाने वाले विश्वनाथ नाना पाटेकर अपनी असल जिंदगी में भी अभिनेता की तरह ही जीते हैं । नाना का जन्मथ मुरूड–जंजीरा, रायगढ़, महाराष्ट्र में हुआ था। उनके पिता का नाम दिनकर पाटेकर और मां का नाम संजनाबाई पाटेकर है। नाना ने मुंबई के जे.जे. स्कूल आफ आर्ट्स से पढ़ाई की। वह कॉलेज द्वारा आयोजित नाटकों में हिस्सा भी लिया करते थे। नाना को स्केचिंग का भी शौक था और वह अपराधियों की पहचान के लिए मुंबई पुलिस को उनकी स्केच बनाकर दिया करते थे।

फिल्मी सफर : अभिनेता नाना ने अपने फिल्मी सफर की शुरुआत वर्ष 1978 में प्रदर्शित मुजफ्फर अली की फिल्म 'गमन' से की। हालांकि फिल्म लखनऊ से पलायन कर एक बेरोजगार युवक की कहानी थी जिसका मुख्य किरदार फारुख शेख तथा स्मिता पाटिल ने निभाया था। ऐसे में नाना के लिए इस फिल्म में पहचान बनाना मुश्किल था। जाहिर है कि जहां नाना की बतौर अभिनेता यह पहली फिल्म थी वहीं फिल्मकार मुजफ्फर अली के निर्देशकीय पारी की भी यह पहली ही फिल्म थी। अपने वजूद को तलाशते नाना को फिल्म इंडस्ट्री में लगभग आठ वर्ष संघर्ष करना पड़ा। गमन के बाद नाना हर छोटे से छोटे रोल करते गए। इस बीच उन्होंने गिद्ध, भालू और शीला जैसी कई दोयम दर्जे की फिल्मों मे अभिनय किया लेकिन इनमें से कोई भी फिल्म बॉक्स आफिस पर सफल नहीं हुई।

1984 में बनी फिल्म 'आज की आवाज' से दर्शकों ने नाना को पहचानना शुरू कर दिया। यह फिल्म पूरी तरह राज बब्बर की अदाकारी पर केन्द्रित होते हुए भी नाना अपने सधे हुए अभिनय की छाप दर्शकों पर छोडने में कामयाब रहे। हालांकि यह फिल्म बॉक्स ऑफिस पर हिट साबित नहीं हुई। इसके बाद उन्हें पहला बड़ा ब्रेक फिल्म अंकुश (1986) से मिला। इस फिल्म में उन्होंने एक ऐसे बेरोजगार युवक की भूमिका निभाई, जो काम नहीं मिलने पर समाज से नाराज है और उल्टे सीधे रास्ते पर चलता है। इसके बाद नाना क्रांतिवीर, हम दोनों, अग्निसाक्षी, खामोशी, गुलाम–ए–मुस्तफा, वैलकम, हैटट्रिक, टैक्सी नम्बर 9211, अपहरण, ब्लफ मास्टर, भूत जैसी फिल्मों में अपने अभिनय और संवाद शैली के जरिए दर्शकों तक पहुंचे। वर्ष 1992 मे प्रदर्शित फिल्म तिरंगा बतौर मुख्य अभिनेता नाना के सिने कैरियर की पहली सुपरहिट फिल्म साबित हुई।

उनकी सफलता का एक नमूना यह भी है कि, नाना पाटेकर पहले ऐसे एक्टर थे, जिन्होंने शाहरुख, सलमान, आमिर और अमिताभ से पहले, अपना मेहनताना 1 करोड़ रुपये मांगा था। यह फीस उन्होंने फिल्म 'क्रांतिवीर' के लिए मांगी थी।

फिल्मी सफर (निर्देशक) : नाना के सिनेमाई सफर में निर्देशकीय पारी का भी बड़ा योगदान हैं। वर्ष 1991 में नाना ने हिन्दी फिल्म निर्देशन में भी कदम रख दिया और 'प्रहार' का निर्देशन और अभिनय भी किया। फिल्म को इसलिए भी

याद रखा जाता हैं कि उन्होंने अभिनेत्री माधुरी दीक्षित को ग्लैमर विहीन किरदार देकर दर्शकों के सामने उनकी अभिनय क्षमता का नया रूप रखा। नाना बॉलीवुड में अपनी छाप छोड़ चुके अभिनेता, निर्देशक फिल्म निर्माता भी बन गए हैं। नाना पाटेकर के प्रोडक्शन हाउस का नाम 'गजानन चित्र' है। इस बैनर तले पहली फिल्म मराठी *नट सम्राट* बनी। नाना ने फिल्म में निर्माता के साथ साथ बतौर अभिनेता भी काम किया।

संवादों के जरिए समाज की पोल खोलते नाना फिल्म क्रांतिवीर का एक संवाद आज हर वर्ग के दर्शकों के दिलों दिमाग में जरूर गूँजता होता। फिल्म के एक दृश्य में एक कॉलोनी में हिन्दू मुस्लिम की आपसी लड़ाई में नाना कहते हैं कि

ये मुसलमान का खून हैं,

ये हिन्दू का खून हैं

(दोनों को मिलाते हुए) बता इस में मुसलमान का कौनसा हैं, हिन्दू का कौनसा, बता

वहीं दूसरी एक और फिल्म अब तक छप्पन' में नाना द्वारा बोला गया एक संवाद समाज की सच्चाई को उजागर करता हमें सुनाई देता हैं। तुम लोग सोसाइटी का कचरा हो..... मैं सोसाइटी का जमादार .....

संवाद को हम सामाजिकता से इसलिए भी जोड़ रहे हैं क्योकि बतौर अभिनेता वह अपने अधिकतर डायलॉग खुद ही लिखते हैं। 'घर में हैं बस छह ही लोग, चार दीवारें, छत और मैं', 'रात सांवली, एक सहेली, गोरा–चिट्टा दिन है दोस्त', 'ये दीवारें मुझे सहारा देती आईं हैं', 'एक मच्छर आदमी को हिजड़ा बना देता है', 'सुबह घर से निकलो भीड़ का हिस्सा बनो', 'गिरो साले गिरो..... पर ऐसे गिरो कि जो झरने से गिरने के बाद भी अपने अस्तित्व को मिटने नहीं देता', ये सभी डायलॉग नाना के लिखे हुए हैं।

इसके अलावा नाना पाटेकर ने गायकी में भी अपना कमाल दिखाया हैं। नाना पाटेकर फिल्म यशवंत, वजूद और आंच में प्ले बैक सिंगिंग कर चुके हैं।

पर्दे के बाहर का बेहतरीन इंसान :

आत्महत्या न करें, मुझे फोन करें। यह किसी फिल्म का नाना द्वारा बोला गया संवाद नहीं हैं बल्कि महाराष्ट्र में खुदकुशी करने वाले किसानों के परिवार वालों को आर्थिक सहायता देने वाले एक्टर नाना पाटेकर ने अपने एक विदर्भ दौरे में कहा। नाना पाटेकर ने महाराष्ट्र के किसानों की गहराती समस्या से निपटने के लिए पुणे में 'नाम फाउंडेशन' की स्थापना की है। यह भी बताया जाता हैं कि नाना को आर्थिक सहायता प्रदान करने की प्रेरणा अपने व्यक्तिगत अनुभवों से मिली। खुद नाना के पिता का निधन दवाइयों के अभाव में हुआ था।

छोटी उम्र से संभाल रहे हैं घर

महाराष्ट्र के एक गरीब परिवार से ताल्लुक रखने वाले नाना पाटेकर के परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण नाना को 13 साल की उम्र से काम करना शुरू करना पड़ा था। खुद नाना बताते हैं कि स्कूल से आने के बाद वह प्रतिदिन 8 किलोमीटर का सफर कर फिल्मों के पोस्टर पेंट करने जाते थे। इसके लिए उन्हें प्रतिमाह 35 रुपए और प्रतिदिन एक वक्त का खाना मिलता था।

नाना के पेंटर पिता बड़ी ही मुश्किल से परिवार चला पाते थे। नाना नाटकों और रंगमंच से मिले पैसे से अपने पिता का इलाज करा रहे थे। जिस दिन पिता का निधन हुआ, उस दिन नाना 'महासागर' नाम का एक शो कर रहे थे। शो के बीच में उन्हें पिता के गुजर जाने की सूचना दी गई, लेकिन नाना ने शो नहीं रोका और उसे पूरा करने के बाद ही पिता के अंतिम संस्कार में शामिल हुए।

नाना के पास अपना सिर्फ 750 स्के.फि. का एक घर है। इसे उन्होंने सिर्फ एक लाख में खरीदा था। वह आज भी इसी घर में रहते हैं।

वे किसान हैं कोई भिखारी नहीं। वे मजबूर हैं। उन्हें खाना, पानी और शौचालयों की जरूरत है। हमें ऐसे किसी एक की तो जिम्मेदारी उठानी चाहिए। यह मुश्किल नहीं। वहीं दूसरी तरफ नाना कहते हैं कि इसी महाराष्ट्र मे पानी की समस्या से हजारों किसान दिन प्रतिदिन आत्महत्या करता हैं और सरकार आईपीएल मैचों से सैकड़ों लीटर पानी बहा रही यह सोचनीय हैं। बॉम्बे हाईकोर्ट के आदेश से 13 से अधिक मैचों को राज्य से बाहर करने वाले निर्णय पर भी नाना सवाल उठाते हुए कहते हैं कि क्या आईपीएल के मैच नहीं होंगे, तब मैदानों में पानी नहीं डाला जाएगा? लेकिन यह एक भावनात्मक मुद्दा है। जब लोग मर रहे हैं, तो हम जश्न कैसे मना सकते हैं?

मीडिया पर भी सवाल उठाते हुए नाना कहते हैं कि यह दुख की बात है कि प्रत्यूषा (बनर्जी) ने आत्महत्या कर ली। लेकिन इसे हर दिन पहले पन्ने पर ही होना चाहिए। इंद्राणी (मुखर्जी) ने कितनी बार शादी की, यह जानने की किसे पड़ी है? मीडिया को महाराष्ट्र का मरता किसान कब दिखेगा ?

खुद नाना ने महाराष्ट्र के 11 गांवों को गोद लिया है जिनमें वह पानी के स्रोतों को पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहे हैं। गौरतलब है कि नाना पाटेकर पिछले काफी समय से महाराष्ट्र के मराठवाड़ा और विदर्भ क्षेत्र में किसानों के लिए लगातार काम कर रहे हैं, जहां सूखे और कर्ज के बोझ के कारण किसानों द्वारा आत्महत्या की घटनाएं सामने आई हैं। बॉलीवुड इंड्रस्ट्री ने नाना के इस काम की काफी सराहना

भी की। अभिनेता अली फजल ने कहा है कि वह किसानों की समस्याओं को हल करने के लिए नाना पाटेकर की प्रतिबद्धता से खासे प्रेरित हुए हैं। वहीं नाना पाटेकर से प्रेरित होकर अक्षय कुमार ने मदद के लिए कदम बढ़ाया । अक्षय कुमार ने अब तक 180 ऐसे किसान परिवार की मदद की जिन्होंने सूखे की वजह से आत्महत्या कर ली । कुल मिलकर देखा जाए नाना पाटेकर ने अपने फिल्मी सफर में जिस प्रकार का अभिनय किया अपनी असल जिंदगी मे भी किसी अभिनेता से कम नहीं हैं।

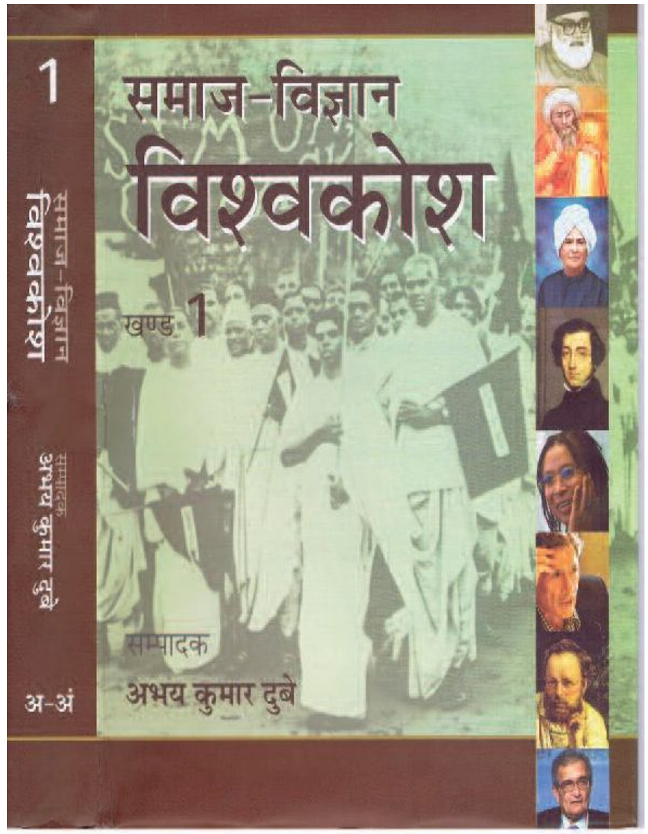

चीनी सद्भावना प्रतिनिधि मण्डल का वर्धा-सेवाग्राम भ्रमण एवं महात्मा गांधी से मुलाकात : एक ऐतिहासिक खोज

अनिर्बाण घोष

प्रथम विश्वयुद्ध (1914–1918) एवं द्वितीय विश्वयुद्ध (1939–1945) बीसवीं सदी की दो महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं जिसमे अमेरिका एवं रूस के नेतृत्व में विश्व के सभी देश दो महाशक्ति दल में विभक्त हो गए थे। चीन और भारत दोनों औपनिवेशिक शासित देश भी इस महायुद्ध में शामिल थे जिसमें औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा दोनों देशों का शोषण हो रहा था। ऐसी परिस्थिति में दोनों देशों के राजनीतिज्ञों और दार्शनिकों ने एक साथ चलने की जरुरत महसूस की। इसलिए बीसवीं सदी की शुरुआत से ही दोनों देशों के बीच राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं अकादमिक आदान–प्रदान बढ़ने लगा और सन 1924 में गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर के चीन भ्रमण के बाद दोनों देशों के राजनीतिज्ञों एवं दार्शनिकों के बीच लगातार संपर्क होने लगा जिसके तहत चीन–भारत सांस्कृतिक समिति (中印学会, Zhōng Yìn XuéHuì) चीन के नानचिङ (1933) में और विश्वभारती शांतिनिकेतन (1934) में स्थापित की गई। सन 1939 के अगस्त माह में अखिल भारत कांग्रेस के कार्यकर्ता जवाहरलाल नेहरू चीन गए थे। वह राष्ट्रपति च्याङ च्येषृ (蒋介石, Jiāng Jièshí), ताए चीथाओ (戴季陶, Dài Jìtáo) सहित और कई नेताओं से मिले थे। चीन प्रजातंत्र के प्रथम राष्ट्रपति सुन चुङषान (孙中山, Sūn Zhōngshān) के घनिष्ठ सहयोगी ताए चीथाओ राज्य परिषद के सदस्य एवं परीक्षा विभाग (एक्सामिनेशन युआन) के अध्यक्ष थे। ताए चीथाओ चीन प्रजातंत्र सरकार के प्रथम स्तर के नेता थे जो कि राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर में काम करते थे। इसलिए सन 1940 में एक महीने से ज्यादा महामहिम ताए चीथाओ का म्यामांर (भुतपूर्व वर्मा) एवं भारत में सद्भावना सफर द्विपक्षीय संपर्क की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है। अपने भारत भ्रमण के दौरान महामहिम ताए चीथाओ महात्मा गांधी से मिलने के लिए वर्धा एवं सेवाग्राम भी आए थे। उनके सफर के मूल उद्देश्य थे :

– भारत और चीन के बीच सद्भावना और मैत्री का विकास हो।

– दोनो देशों के बीच अकादमिक और सांस्कृतिक संपर्क बढ़ने में सहायता देना।

– गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू जैसे दार्शनिकों एवं राजनीतिज्ञों के साथ मिलना एवं बातचीत करना।

– शांतिनिकेतन में चीन भवन का निर्माण कार्य एवं चीन–भारत सांस्कृतिक समिति का दैनन्दिन कार्य से अवगत होना।

– बौद्धधर्म के विभिन्न तीर्थयात्रा स्थल में भ्रमण करना ।

कोलकाता में गुरुदेव से मुलाकात

महामहिम ताए चीथाओ के नेतृत्व में आया चार सदस्यीय चीनी सद्भावना प्रतिनिधि मण्डल 10 नवंबर, 1940 को म्यांमार की राजधानी रंगून यांगन (भुतपूर्व रंगून) पहुँचा। इस प्रतिनिधि मण्डल में महामहिम ताए चीथाओ के अलावा दो सचिव थाए आनछ्यु एवं षन चुङलिएन व विदेश राज्यमंत्री टी.के. त्चङ भी शामिल थे। दिनांक 12 नवंबर 1940 को कोलकाता में ताए चीथाओ एवं विदेश राज्यमंत्री टी.के. त्चङ गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर से मिलने गए। महामहिम ताए चीथाओ ने रवींद्र नाथ टैगोर के शारीरिक कुशल मंगल कामना की एवं चीन के राष्ट्रपति च्याङ च्येषृ द्वारा दिया पत्र गुरुदेव को प्रदान किया। इस पत्र में चीनी राष्ट्रपति ने लिखा, "Dear Poet Tagore, I learnt with concern of your recent illness. I have requested President Tai Chitao to personally visit your country and to enquire about your health with a view to expressing my profound respect and kind rememberance. Mr.Tai and I are both deeply interested in the International University at Santiniketan and the China Institute under your sponsorship. I sincerely hope you would show him how to strengthen further the cultural relationship and cooperation between Indian and Chinese people".

वर्धा व सेवाग्राम भ्रमण

कोलकाता से चीनी सद्भावना प्रतिनिधि मण्डल बनारस, सारनाथ, इलाहाबाद भ्रमण के बाद दिल्ली से ग्राण्ड ट्रंक एक्सप्रेस में (महात्मा गांधी से मुलाकात करने) वर्धा

पहुँचे। वर्धा रेल स्टेशन पर प्रतिनिधि मण्डल का स्वागत करने सेठ जमनालाल बजाज, श्री महादेव देसाई एवं अखिल भारत कांग्रेस कमेटी (ए.आई.सी.सी.) विदेश विभाग के सचिव डॉ. बालकृष्ण केसकार उपस्थित थे। डॉ. केसकार और सेठ जमनालाल बजाज इलाहाबाद एवं बम्बई से केवल इस कार्यक्रम में भाग लेने के लिए वर्धा में आए थे। दिनांक 22–23 नवंबर 1940 को वे लोग वर्धा में रहे। जिसमें वे श्री महादेव देसाई एवं सेठ जमनालाल बजाज के अतिथि थे। इस चीनी प्रतिनिधि मण्डल के साथ, विश्वभारती शांतिनिकेतन चीन भवन (भारत का पहला चीनी अध्ययन प्रतिष्ठान) के निदेशक प्रोफेसर थान युनषान एवं कोलकाता चीनी कन्सुलेट के कनसाल जेनेरल सि.सि. ह्वाङ भी थे। महामहिम ताए चीथाओ के सम्पूर्ण यात्रा प्रवास को सुचारु रुप से संपन्न करने के लिए प्रोफेसर थान युनषान एवं डॉ. बालकृष्ण केसकार को विशेष दायित्व सौंपा गया था। चीनी अतिथि वर्धा के बेसिक ट्रेनिंग विद्यालय में गए एवं लक्ष्मी नारायण मन्दिर में दर्शन किए जहाँ महामहिम ताए चीथाओ ने 100 रूपए भेंट चढ़ाए। यह लक्ष्मी नारायण मन्दिर सेठ जमनालाल बजाज द्वारा हरिजन समुदाय के लिए सर्वप्रथम खोला गया था। वर्धा स्थित कॉमर्स कॉलेज एवं नवभारत विद्यालय के समक्ष एक खुले अधिवेशन में महामहिम ताए चीथाओ ने कहा: "The connections between India and China are 2000 years old, and they have been kept up by Indian and Chinese scholars visiting each other's countries. Our relationship is based more on spiritual intercourse than material gain. We have got spiritual comfort from India for which we are grateful." सन 1939 में पण्डित नेहरू का चीन प्रवास याद करते हुए उन्होंने कहा: "We are grateful to Pandit Jawaharlal Nehru for his recent visit which has been very useful in extending to us a neighbour's sympathy when China greatly needed it. I wish you all cultural, economic and all round progress so that you may be happy." इस सभा के बाद चीनी अतिथि सेठ जमनालाल बजाज के साथ सेवाग्राम में महात्मा गांधी से मिलने गए।

सेवाग्राम आश्रम में चीनी अतिथियों को महात्मा गांधी की पत्नी कस्तूरबा गांधी ने माला देकर स्वागत किया। सेवाग्राम आश्रम में महामहिम ताए चीथाओ और उनके साथियों ने एक घन्टे की बैठक की। बैठक में महामहिम ताए चीथाओ और महात्मा गांधी के बीच चीन–जापान युद्ध, अहिंसा एवं चरखा के संबंध में चर्चा हुई। महामहिम ताए चीथाओ ने महात्मा गांधी को च्याङ च्येषृ द्वारा दिया गया पत्र सौंपा और सभी चीनी लोगों के ओर से उन्हें शुभकामना दी। बैठक में उन्होंने उस समय पण्डित नेहरू कारागार में रहने के कारण अपने गहन चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने गांधीजी को यह बताया, "We are passing through difficult times, I want to know how I can get through our difficulty successfully. Victory is not enough; future peaceful relations between nations must also be established." गांधीजी ने चीनी अतिथि को भारत और चीन की वर्तमान स्थिति का वर्णन करते हुए बताया कि, "Just as you are engaged in a terrific life and death struggle, so are we. Yours is an ancient country and so is ours and although yours is a much bigger country than ours, ours is not by any means a small country and there is much in common between you and us." गांधीजी ने यह बताया कि दक्षिण अफ्रिका में जोहानेसबर्ग में रहने के समय वह चीनी लोगों से अकसर मिलते थे और उन लोगों को कानूनी सहायता प्रदान करते थे।

गांधीजी ने चीनी अतिथियों को अपने भारत की आजादी में अहिंसा आंदोलन के बारे में बताया, "Although you are engaged in a life and death struggle and so are we, the means we employ for regaining our freedom. This does not mean that I want to criticize the means you have adopted. The remedy you employ in self defence is an age old one. I am employing a remedy which is unknown to the world on the political field. But since you have come all the way from China merely to reciprocate the good wishes that Pandit Jawaharlal carried there, the only service I can render in my humble way is to put forward before you and through you, the Generalissimo, the new remedy I am applying". महामहिम ताए चीथाओ ने गांधीजी के अहिंसक आंदोलन की प्रशंसा की एवं चीन में भी इसकी प्रसिद्धि के बारे में बताया। उन्होंने समस्त चीनी नागरिक, कुओमिनताङ पार्टी की ओर से गांधीजी के शारीरिक स्वास्थ्य एवं उज्ज्वल भविष्य की कामना की। विदा लेके समय महामहिम ताए चीथाओ ने गांधीजी को बताया, "I pray that for the welfare of India and China and for the whole humanity you may have a long life, and I pray on behalf of all members of the Kuomintang Party (国民党, Guómíndng) and pray for your welfare and for the welfare of your family."

महात्मा गांधी : "My family is a family of 350 millions."

ताए चीथाओ: "All mankind."

महात्मा गांधी: "Yes. If I can make good my claim for 350 millions, I will advance the other claim. Please carry my good wishes to the Generalissimo, to the Madame, his staff and all who are putting up a brave fight in self defence and I wish you early peace."

जब गांधीजी सेवाग्राम कुटीर के बाहर निकले (चीनी अतिथियों को विदा करने) महामहिम ताए चीथाओ ने बताया, "Your health is extraordinarily good." गांधीजी ने उत्तर दिया, "Yes. The charkha keeps me healthy and then I do not carry any cares on my head, I have cast them on the

broad shoulders of God."

सेठ जमनालाल बजाज ने चीनी प्रतिनिधि मण्डल को विदा किया और उसके बाद वे दिनांक 24 नवंबर हैदराबाद गए जहाँ निजाम सरकार की ओर से आमंत्रण दिया गया था। उसके बाद चीनी प्रतिनिधि मण्डल बम्बई गए और अंत में दिनांक 9 दिसंबर शांतिनिकेतन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टेगोर से मिलने गए। शांतिनिकेतन में आम्रकुंज में एक संवर्धना सभा का आयोजन किया गया था और उन्होंने ऐतिहासिक चीन–भवन हॉल में अपना वक्तव्य पेश किया था। चीन–भवन निर्माणकार्य सम्पूर्ण करने के लिए रूपए 10,000 प्रदान किया था। प्रतिनिधि मण्डल ने लगभग एक महीने का भारत प्रवास सम्पूर्ण करने के बाद दिनांक 14 दिसंबर कोलकाता से रंगून की ओर प्रस्थान किया और सिंगापुर होकर चीन में वापस गये।

इस ऐतिहासिक सफर की उपलब्धियाँ निम्नलिखित थी :

– यह चीन से आया हुआ बीसवीं सदी का पहला उच्च–स्तरीय दल था, जिन्होंने एक महीने से ज्यादा समय तक और दस से अधिक शहरों में प्रवास किया था।
– सम्पूर्ण सफर में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर से दो बार मुलाकात। सफर की शुरुआत एवं अंत कोलकाता में।
– प्रतिनिधियों ने लगभग सभी उच्च–स्तरीय भारतीय राजनीतिज्ञों, लेखकों, दार्शनिकों से मुलाकात की।
– शांतिनिकेतन में चीन–भवन का निर्माण कार्य (एशिया में चीन के बाहर पहला कोई प्रतिष्ठान) एवं चीन–भारत सांस्कृतिक समिति के कार्य से अवगत होना।
– इससफर के बाद चीन के राष्ट्रपति जेनेरालिसिमो च्याङ चीएषृ ने सन 1942 फरवरी में भारत यात्रा की थी।

ZAR PATRIKA

H. E. TAI CHI TAO

ARRIVAL WITH PARTY AT WARDHAGANJ

WARDHAGANJ, Nov. 22.

His Excellency Tai Chi Tao, accompanied by his staff and Prof. Tan Yun Shan, Director, China Bhavan, Vishwabharati Institute, and Mr. C. C. Huang, Chinese Consul-General in Calcutta, arrived this evening by the Grand Trunk Express from Delhi. Seth Jamnalalji Bajaj, Mr. Mahadeo Desai and Dr. Balkrishna Keskar, Secretary, A.I.C.C., Foreign Department, received them at the station. Dr. Keskar had specially had come from Allahabad. The tour programme will be fixed in consultation with Dr. Keskar and Prof. Tan Yun Shan.

The members drove to Seth Jamnalalji's residence. The Mission probably leaves to-morrow for Bombay after meeting Gandhiji.

Shah Ozair Muneimi, Secretary, Bihar Provincial Congress Committee, arrived this morning to meet Gandhiji.—(U. P.)

अमृतबाजार पत्रिका आर्काइव न्यूज, 24 नवंबर 1940

संदर्भ:

1. "Chinese Envoy at Calcutta: Civic Reception Accorded", "Tai Chi Tao Leaves for Benares". द इण्डियन एक्सप्रेस। 16 नवंबर 1940: 1। देखिए https://news.google.com/newspapers?nid= P9oYG7HA76 QC&dat=19401116 &printsec=frontpage&hl =en. वेब। 18 सितंबर 2016।
2. "H.E. Tai Chi Tao at Delhi". द इण्डियन एक्सप्रेसण 19नवंबर1940:3. देखिए https://news.google.com/ newspapers?nid= P9oYG 7HA76QC&dat= 19401119&printsec= frontpage&hl =en. वेब। 16 सितंबर 2016।
3. "Chinese Mission at Wardha". द इण्डियन एक्सप्रेस. 24 नवंबर 1940 :9.देखिए https://news.google.com/newspapers?nid=P9o YG7HA7 6QC&dat=19401124&printsec=frontpage&hl=en. वेब। 16 सितंबर 2016.
4. "H.E. Tai Chi Tao: Arrival with Party at Wardhaganj". अमृत बाजार पत्रिका 24 नवंबर 1940 : 10. देखिए http://eap.bl.uk/database/ large_image.a4d?digrec=4266169;catid=226914;r=28145. वेब। 23 सितंबर 2016.
5. "IndoAChinese Relations: Tai Chai Tao's Address", "Chinese Mission Meets Gandhi". द इण्डियन एक्सप्रेस. 25 नवंबर 1940 : 8. देखिए https://news.google.com/newspapers?nid=P9oYG7 HA76QC&dat=19401125&printsec=frontpage&hl=en. वेब। 16 सितंबर 2016.
6. Visva – Bharati News. Volume X, Number Three, सितंबर 1941 : 35. प्रिंट.
7. "The SinoAIndian Cultural Society of India". Twenty Years of the VisvaABharati CheenaABhavana (1937A1957). Ed. Tan YunAShan, 1957: 32A33. fizaV.
8. "Gandhiji Asks China to Bless Indian Movement: 'Charkha' Reception to Tai Chi Tao at Sevagram". , "Chinese Mission Meets Gandhi", Chinese Mission in Hyderabad". द इण्डियन एक्सप्रेस. 25 नवंबर 1940 : 8. देखिए https://news.google.com/news-papers? nid=P9o YG7HA76QC&dat=19401126&printsec=frontpage&hl=en. वेब। 19 सितंबर 2016.
9. "Tai Chi Tao Meets Gandhiji: Mhatmaji's Message of NonAVi-olence Explained". अमृत बाजार पत्रिका। 27 नवंबर 1940 : 6. देखिए http://eap.bl.uk/database/large_image.a4d?digrec=4266207;catid=226917;r=29358. वेब। 23 सितंबर 2016.
10. "Chinese Goodwill Mission Sails". द इण्डियन एक्सप्रेसण 15 दिसंबर 1940 : 3. देखिए https://news.google.com/newspapers?nid =P9oY G7HA76QC&dat=19401215&printsec=frontpage &hl=en. वेब। 20 सितंबर 2016

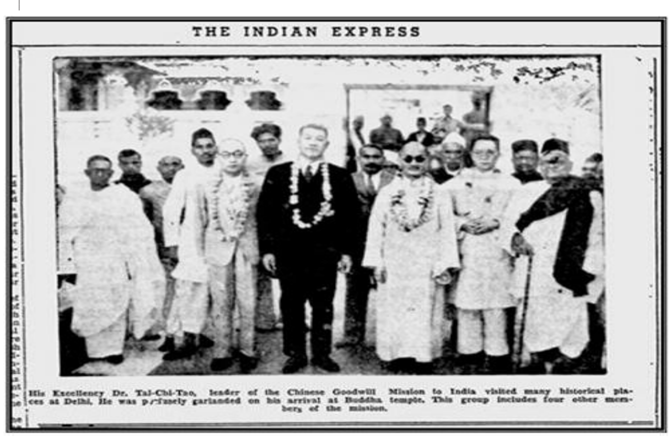

द इण्डियन एक्सप्रेस आर्काइव न्यूज, 27 नवंबर 1940, दिल्ली में प्रतिनिधि मण्डल के साथ विश्वभारती शांतिनिकेतन स्थित चीन भवन के निदेशक प्रो। थान युनषान एवं सेठ जमना लाल बजाज भी शामिल

सऊदी अरब का संकट और प्रवासी भारतीय श्रमिक

अभिषेक त्रिपाठी

प्रवासन एक क्रिया है, जिसका सम्बन्ध मनुष्य की स्थितियों से होता है। मनुष्य की जन्मजात गतिशीलता और महत्वाकाक्षाएं प्रवासन का रूप एवं मार्ग निर्धारित करती हैं। स्थानीय दबाव, राज्य का व्यवहार, आकर्षण के केन्द्रों, सुखद और समृद्ध जीवन की आकांक्षा जैसे कारक प्रवासन की प्रक्रिया, स्वरुप और दिशा को निर्धारित करते हैं। उच्च शिक्षा का स्तर एवं उपलब्धता, व्यवसाय व नौकरी के अवसर, वेतन का स्तर, राजनीतिक–आर्थिक सहयोगिता, स्वास्थ्य–सेवा, प्रवासन तथा नागरिकता संबंधी नीतियाँ, सामाजिक–सांस्कृतिक सहयोगिता व आजादी, वैश्विक व्यवस्था में मुद्रा की स्थिति, वैश्वीकरण, विश्व बाज़ारों का एकीकरण, संचार एवं यातायात की द्रुतगमिता, सुरक्षा, इत्यादि कुछ ऐसे कारण हैं जिन्हें राष्ट्रीय कारक के रूप में लिया जा सकता है। ये राष्ट्रीय कारक अपने स्वरूप और स्थान (मूल एवं गंतव्य देश) के आधार पर धकेलने एवं खींचने वाले कारक (Push & Pull factor) के रूप में कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तिगत कारक हैं जो प्रवासन की दशा एवं दिशा को निर्धारित करते हैं।

भारत से श्रमिकों का प्रवासन खाड़ी के देशों में कोई नई घटना नहीं है, भारत के आंध्र–प्रदेश, तमिलनाडु, केरल, बिहार, एवं उत्तर–प्रदेश से यह प्रवासन होता रहा है। अगर 2014 के आकड़ों पर गौर किया जाए तो लगभग 8 लाख प्रवासियों का प्रवासन भारत से विश्व के अन्य देशों में हुआ। कुल प्रवासन का 90 प्रतिशत प्रवासन खाड़ी के देशों सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत, बहरीन, ओमान एवं कतर के देशों में होता रहा है। अगर आंकड़ों को देखा जाए तो लगभग 30 लाख भारतीय प्रवासी सऊदी अरब में रह रहे हैं। यह प्रवासी खाड़ी के देशों में अर्ध–कुशल, अकुशल एवं कुशल श्रमिक के रूप में अपनी सेवा दे रहे हैं। इन श्रमिकों की स्थिति खाड़ी के देशों में अच्छी नहीं है किंतु रोजगार, परिवार, आर्थिक समस्याएं इन्हें खाड़ी के देशों में अपने परिवारों से कोसों दूर कार्य करने के लिए मजबूर करती हैं। सऊदी में नौकरी करने वाले लेबर महीने में 25 हजार रुपए तक कमा लेते हैं। इनमें से ज्यादातर श्रमिक अनपढ़ या 5वीं तक पढ़े है। मैट्रिक वालों की संख्या महज 20 प्रतिशत तक है। यहां एजेंटों से कॉन्ट्रैक्ट कर एक से सवा लाख रुपए भारत से प्रवासन के लिए देते हैं। सऊदी में इनको 17 से 25 हजार रुपए तक वेतन मिलता है।

सऊदी अरब में प्रवासियों के साथ वर्तमान में जो समस्या हो रही है यह कोई नई घटना नहीं है, बशर्ते इसका स्वरूप जरूर विस्तृत है। यही वजह है कि भारत सरकार इस समस्या के समाधान के लिए पुरजोर कोशिश कर रही है। अब तक प्राप्त आकड़ों के मुताबिक सऊदी अरब में लगभग 10000 से अधिक भारतीय प्रवासी भूख–प्यास, वेतन, की समस्या से बेहाल हैं। 5547 लोग रियाद के 14 सुरक्षा शिविरों में रह रहें है, 2153 लोग जेद्दाह के 6 शिविरों में रह रहे हैं, 4072 लोग सऊदी–गर कंपनी के कर्मचारी हैं जो रियाद के 10 शिविरों में रह रहे है, 1457 साद ग्रुप के कर्मचारी जो दमाम के शिविरों में रह रहे हैं। इन्हें 4 महीने से कंपनियों ने सैलरी नहीं दी है। इनके पास खाना खरीदने तक के पैसे नहीं हैं। केंद्रीय मंत्री वी के सिंह सऊदी अरब में फंसे 10 हजार भारतीयों को एयरलिफ्ट कराने के लिए जेद्दाह पहुंच चुके हैं। सिंह ने भारतीय कामगारों की समस्याओं के मुद्दे पर लेबर एंड सोशल डेवलपमेंट मिनिस्टर मोफरेज अल हकवानी से मुलाकात की। मजदूरों को वापस भारत लौटने की परमीशन दे दी गई है। वहीं, 100 से ज्यादा कंपनियां बंद होने से करीब 15 हजार भारतीयों के करीब 120 करोड़ रुपए फंस गए हैं। संभव है कि सऊदी अरब में फंसे इन भारतीय नागरिकों की यथाशीघ्र एयरलिफ्टिंग भी हो। अब सऊदी अरब में फंसे भारतीयों को निकालने की कार्रवाई लगभग शुरू हो गई है। सऊदी अरब में जिस प्रकार के हालात बन रहे थे, उनका आकलन शायद सही से नहीं हो पाया, जिससे वहां रह रहे भारतीयों को समय रहते सचेत किया जा सकता था। नतीजा यह हुआ कि वे सऊदी अरब की गिरती आर्थिक स्थिति के जाल में उलझते चले गए और अब वे स्पांसरों, एजेंटों और कंपनियों के बंधक बनकर सऊदी अरब में भूखों मरने के लिए विवश हैं।

सऊदी सरकार ने भारतीय प्रवासियों को कंपनियां बदलने की छूट भी दी है। इन कंपनियों के मालिक या तो अंडरग्राउंड हो गए हैं या उन्होंने खुद को दिवालिया घोषित

कर दिया है। भारतीय सरकार ने लेबर कोर्ट का सहारा लिया है, 55 कंपनियों को नोटिस मिल चुका है। रियाद में भारतीय दूतावास के अफसरों के मुताबिक, सऊदी सरकार के लेबर और फॉरेन मिनिस्ट्री के पास रिपोर्ट पहुंच चुकी है। अब तक सऊदी सरकार ने 55 सऊदी कंपनियों की सीआर क्लोज करके इनको नोटिस दिए हैं। सऊदी में किसी कंपनी की सीआर क्लोज करने के मायने हैं कि उस कंपनी के बिजली, पानी व टेलीफोन कनेक्शन बंद, अन्य सरकारी राहत भी बंद और उनके खिलाफ कार्रवाई शुरू हो जाती है।

राज्यसभा में सुषमा स्वराज भी कह चुकी हैं कि जो भी भारतीय वहां से देश लौटना चाहते हैं सरकार उनके लिए व्यवस्था करेगी। रियाद में इंडियन काउंसलेट ने भी कैंपों में रह रहे 2500 से ज्यादा ऐसे भारतीयों की जानकारी जुटाई है जो देश लौटना चाहते हैं। लोकसभा में सरकार की तरफ से बयान देते हुए भारत की विदेश मंत्री श्रीमति सुषमा स्वराज ने कहा, 'मैं हर घंटे स्थिति पर नजर रख रही हूं। वहां बेरोजगार हुआ कोई भी भारतीय भूखा नहीं रहेगा।' सऊदी अरब में फंसे 10 हजार से ज्यादा बेरोजगार भारतीय मजदूरों के पास देश वापसी के लिए किराया तक नहीं है। कई कंपनियां तो इन लोगों के पासपोर्ट तक जब्त कर लेती हैं। इन लोगों को 7 महीने से सैलरी नहीं मिली है। इंडियन एम्बेसी ने इन लोगों को अगले 10 दिनों के लिए खाने–पीने का सामान दिया है।

एक अनुमान के मुताबिक साल 2015 में गल्फ कंट्रीज में 5900 भारतीय मजदूरों की मौत हो चुकी है। भारतीय मजदूर खाड़ी देशों बहरीन, कतर, ओमान, सऊदी अरब, यूएई में अच्छी सैलरी मिलने के चलते वहां जाते हैं। खाड़ी देशों में काम कर रहे भारतीय मजदूर हर साल 30 बिलियन डॉलर इंडिया भेजते हैं। यह उत्प्रवाह भारतीय सरकार की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आपको यह भी अवगत होगा कि पिछले कई वर्षों से विश्व में भारत सबसे अधिक विदेशी आर्थिक उत्प्रवाह प्राप्त करने वाला देश है।

दरअसल, सऊदी अरब में फंसे प्रवासी कामगारों के लिए सबसे ज्यादा दिक्कत काफला प्रणाली ने पैदा की। इसमें यह व्यवस्था है कि प्रवासियों को किसी व्यक्ति द्वारा स्पांसर किया जाता है। इस स्थिति में प्रवासी मजदूर का पासपोर्ट, यहां तक कि वेतन भी उस प्रायोजक (कपिल) के पास जमा रहता है। फलतः मजदूर स्पांसर करने वाले व्यक्ति को छोड़ नहीं पाता। इसका फायदा उठाते हुए कपील मजदूर को जाने नहीं देता। इसी व्यवस्था के तहत भारतीय मजदूर वहां निर्माण, सप्लाई चेन, ड्रायवर, कारपेंटर, पेंटर, रसोइया, धोबी, खेतों में मजदूरी या फिर कुछ टेक्निकल कार्यों में लगे हुए हैं। इस प्रकार से नियोजित मजदूरों की स्थिति अधिक खराब है, बाकी जो बड़ी कंपनियों में सॉफ्टवेयर, हार्डवेयर, सिविल व मैकेनिकल इंजीनियर जैसे पदों पर कार्यरत हैं, उनकी स्थिति कुछ बेहतर है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक सऊदी अरब, बहरीन, कुवैत, कतर, यूएई और ओमान जैसे खाड़ी देशों में तकरीबन 60 लाख भारतीय काम करते हैं।

इस स्थिति का मुख्य कारण सऊदी अरब की अर्थव्यवस्था में आई मंदी का नतीजा है। ऐसी सूचनाएं हैं कि वहां अधिकतर भारतीय प्रवासी जिन कंपनियों में कार्यरत हैं, उनकी वित्तीय हालत बिगड़ने के कारण कर्मचारियों को पिछले छह–आठ महीने से वेतन नहीं मिला है। वेतन न मिलने और वीजा समेत दूसरे कागज नियोक्ता या कपील के पास जमा होने के कारण ये भारतीय नागरिक स्वदेश भी नहीं लौट पा रहे। सऊदी अरब की अर्थव्यवस्था तेल पर आधारित है और उसके राजस्व में करीब 70 से 80 प्रतिशत हिस्सेदारी तेल की रहती है। लेकिन पिछले कुछ समय से अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल की गिरती कीमतों ने सऊदी अर्थव्यवस्था को जबर्दस्त झटका दिया है। इसका असर निर्माण कंपनियों, रियल एस्टेट और सप्लाई चेन कारोबार पर पड़ा। स्वाभाविक है कि ये कंपनियां दबाव में आईं और अल–लादेन जैसी कंपनियों ने 50–50 हजार कर्मचारियों तक की छंटनी कर डाली। चूंकि इन कंपनियों की किसी न किसी रूप में कनेक्टिविटी छोटी कंपनियों से रहती है, इसलिए असर नीचे तक भी पहुंचा। हालांकि कुछ समय पूर्व ही सऊदी अरब के डिप्टी क्राउन प्रिंस मोहम्मद बिन सलमान ने सऊदी 'विजन 2030" जारी किया है, जिसके तहत इस किंगडम देश की अर्थव्यवस्था को तेल अर्थव्यवस्था से विनिर्माण अर्थव्यवस्था की ओर ले जाने का विजन पेश किया गया है, ताकि देश की तेल पर निर्भरता कम हो सके। ब्लूप्रिंट के मुताबिक सऊदी अरब अपनी सबसे बड़ी तेल कंपनी अरामको के 5 फीसदी शेयर बेचकर पैसे जुटाएगा, साथ ही गैर–तेल राजस्व जुटाने पर ध्यान देगा। इसके साथ ही सऊदी अरब ने दुनिया के सबसे बड़े सॉवरिन वेल्थ फंड की स्थापना करने का भी निर्णय लिया है। यह निर्णय सरकारी संपत्तियों को होल्ड करने के लिए लिया गया है। किंतु इन सुधारों का असर काफी देर से दिख पाएगा और इसका लाभ प्रवासी मजदूरों को हासिल भी हो पाएगा, इसकी गारंटी नहीं है।

बहरहाल, सऊदी अरब में उपजे इस संकट के लिए उसकी नीतियां भी काफी हद तक दोषी हैं। सऊदी अरब जिस तरह से इस्लामी देशों के बीच मिलिट्री एलायंस का प्रयास कर रहा है और दुनिया का सबसे बड़ा हथियार आयातक बनने की ओर बढ़ रहा है, उससे खाड़ी देशों में

नई शंकाओं एवं संघर्ष की स्थितियां बन रही हैं। ये हालात आने वाले समय में खाड़ी देशों की आर्थिक–राजनीतिक स्थिति के लिए अनुकूल नहीं होंगे। जाहिर है, इससे भारतीय प्रवासी मजदूरों की स्थितियां और बदतर होंगी। हालांकि मजदूरों की समस्या केवल इन्हीं देशों में नहीं, बल्कि उनके अपने देश के एजेंटों की संदिग्ध कार्यप्रणाली में भी निहित है, जो इनसे मोटी रकम लेकर, बड़े स्वप्न दिखाकर खाड़ी देशों में भेजते हैं। लेकिन वहां पहुंचने पर स्थितियां कुछ और होती हैं। ये कफील के बंधक बनने को विवश होते हैं। सरकार को इस स्तर पर भी कोई पहल करनी चाहिए। वर्तमान सरकार सऊदी अरब में फंसे भारतीय प्रवासियों को वहां से निकालने एवं उनका हक दिलाने की पुरजोर कोशिश कर रही है। वह कितना कामयाब रहेगी यह उसकी विदेश नीति पर निर्भर है। भारतीय सरकार को सऊदी अरब की समस्या को आलोक में लेते हुए प्रवासियों को अन्य देशों में इस प्रकार की समस्या का सामना न करना पड़े, इस ओर भी कदम बढ़ाना चाहिए।

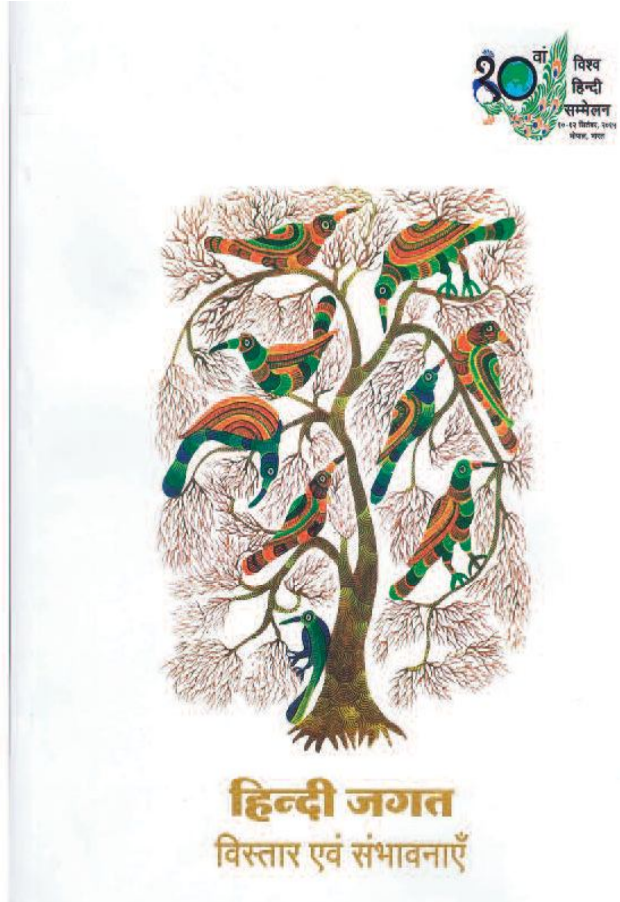

आजादी की जंग में महिलाएँ

अवन्तिका शुक्ला

देश की आजादी की 70 वीं वर्षगांठ हमने हाल ही में मनाई है। देश भर में आजादी के शहीदों की कुर्बानियां याद की गई। कार्यक्रम आयोजित किए गए। हर बार जब भी हम स्वतंत्रता आन्दोलन पर बात करते हैं , तो हमारा मस्तक गर्व से ऊँचा हो जाता है कि इस मिट्टी में जन्मे लालों ने देश का आजादी के लिए हंसते– हंसते अपनी बलि चढ़ा दी। जब भी हम आजादी के शहीदों को याद करते हैं, तो उनमें अक्सर उन शहीद पुरुषों का वर्णन अधिक होता है, जिनके नाम इतिहास में स्वर्णाक्षर से लिख दिए गए हैं। लेकिन आजादी की जंग किसी धर्म, किसी वर्ण, किसी जाति ,किसी क्षेत्र या किसी जेंडर में सीमित नहीं थी। देर से ही सही लेकिन कई इतिहासकारों ने कई ऐसे दस्तावेजों को खोज कर निकाल लिया ,जिसने आजादी की जंग में महिलाओं के संघर्ष और उनकी भागीदारी को सामने प्रस्तुत किया। इन महिलाओं में बेगमों से लेकर तमाम बांदियां, तवायफों से लेकर शिक्षित– अशिक्षित, अमीर गरीब, सवर्ण–दलित सभी श्रेणियों की महिलाओं के बड़े तबके शामिल थे। सभी तबकों का रक्त इस आजादी के लड़ाई में बहा। इस आलेख में ऐसी ही कुछ महिलाओं के आजादी के संघर्ष से जुड़े कुछ प्रसंगों का वर्णन किया गया है। इन प्रसंगों के माध्यम से हम जहां महिलाओं की बहादुरी को देख पायेंगे वहीं उनके संघर्षों के विभिन्न आयामों को भी समझ पाएंगे, उनके त्याग को सम्मान दे पाएंगे। किन सामाजिक, पारिवारिक चुनौतियों के बीच इन महिलाओं ने खुद को इस जंग में लगातार शामिल रखा और अपने जज्बे में कमी न आने दी, यह देखना सबसे महत्वपूर्ण है। इस आलेख में कई ऐसी महिलाओं का भी जिक्र हैं, जिन्हें इतिहास में बहुत देर से शामिल किया गया, जिनमें दलित महिलाएं और तवायफें प्रमुख हैं पर जब उनका जिक्र आया तो उसने इतिहास के ऊपर एक बड़ा सवालिया निशान लगा दिया कि ऐसा क्यों हुआ कि आजादी की आन्दोलन में सहभागिता करने वाले बडे तबके के अनुभव और संघर्षो को इतिहास में जगह नहीं मिल पायी। क्या इसमें ज्ञान की सत्ता पर नियंत्रण का मामला छिपा हुआ है?

आजादी के आंदोलन के प्रारंभ की चर्चा में सन 1857से ही करना चाहूंगी। इस दौर में राजा, नवाब,जागीरदार के संघर्ष तो हमें मुख्यधारा का साहित्य देता है, लेकिन किसान, दलित, आदिवासी, महिलाओं आदि के संघर्ष उत्तराधुनिक विमर्श, निम्नवर्गीय प्रसंगों, महिला अध्ययन आदि के माध्यम से ही हमें मिल पाए। यह सत्य है कि इन लोगों का दस्तावेजीकरण प्रारंभ में ही कई ब्रिटिश अधिकारियों ने अपने संस्मरणों, डायरियों में किया था। पर हमारे इतिहास का हिस्सा बनने में इसे समय लगा और यह दलित आंदोलन, महिला आंदोलन के बाद इस तबके में आई जागरूकता के बाद ही संभव हो पाया। इन्हीं के प्रयासों से विभिन्न क्षेत्रों में दलितों और महिलाओं की अदृश्य भूमिकाओं को एक दृश्यता मिल पाई। लेकिन आजादी की जंग में शामिल हाशिए के उस तबके ने शायद ही कभी सोचा होगा कि उसके प्रयासों को कोई दृश्यता मिलेगी भी नहीं। इतिहास में गुम ऐसे नामों को जब हाशिये की वैचारिकी में रुचि लेने वाले इतिहासकार सामने लेकर आए तो एक नए ही इतिहास का सूत्रपात हुआ। कई मिथक बने तो कई टूटे भी। आजादी का यह नया इतिहास समग्र ज्ञान की दिशा की तरफ बढा, तमाम खंडित जानकारियों को साथ जोड़ते हुए और यह सिलसिला आगे भी सक्रिय है।

1857 के संघर्ष में लक्ष्मीबाई के कौशल से हम बचपन से ही परिचित हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता "बुंदेले हर बोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी,खूब लड़ी मर्दानी वो तो झांसी वाली रानी थी"आज भी लोगों के दिलों पर राज करती है। रानी की वीरता हमारे बीच भी देशभक्ति और बहादुरी का भाव पैदा करती है। लेकिन एक नाम और है जो कि दलित आन्दोलन के विकास के बाद उभरा। इतिहास में वह नाम दर्ज था पर उस पर दृष्टि नहीं डाली गयी थी।यह नाम था रानी की सेविका झलकारी बाई का। झलकारीबाई रानी के एक साधारण सैनिक पूरन कोरी की पत्नी थीं।अपने पति से उन्होंने मल्लयुद्ध, घुड़सवारी, तलवार चलाना, बंदूक चलाने आदि का प्रशिक्षण लिया था।वह अपने पति के साथ कपड़े बुनने में मदद करती थी या महल में जाकर छोटे–मोटे कामों में सहयोग करती थीं। कहा जाता है कि उनका शरीर और चेहरा रानी झांसी से बहुत मिलता जुलता था। धीरे–धीरे वह रानी की मित्र बन गई और रानी ने झलकारी की बहादुरी से प्रभावित होकर महिला सैनिकों के दल ""दुर्गादल"" की

जिम्मेदारी झलकारी बाई को सौंप दी। झलकारी ने भी अंग्रेजों के खिलाफ रानी के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ाई लड़ी। युद्ध में उसके पति की मौत का समाचार सुनने के बाद वह और भी ज्यादा आक्रामकता से लड़ी। युद्ध में उनके कई गोलियां लगीं और झलकारी वीरगति को प्राप्त हुईं। यह भी कहा जाता है कि उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था,और काफी समय बाद छोड़ दिया गया (गुप्ता, 2008)। चारु गुप्ता अपने आलेख में कई कविताओं ,लेख पैंफलेट,पुस्तकों आदि का जिक्र करती हैं,जिसमें झलकारीबाई की वीरता का जिक्र है कि किस प्रकार उन्होंने अंग्रेजो से लोहा लिया। अन्य दलित वीरांगनाओं में ऊदादेवी नामक पासी महिला का नाम आता है। लखनऊ में ब्रिटिश सेना को बड़ी टक्कर ऊदा देवी ने दी थी। जब लखनऊ पर आक्रमण हुआ तो वे सिकंदरबाग में मर्दाना वेश पहनकर पीपल के एक पेड़ पर चढ गई और पत्तों में छिपकर वहीं से गोलियों से निशाना लगाती रहीं। इस तरह उन्होंने दसियों सिपाहियों को ढेर कर दिया। एक सिपाही की नजर उस पेड़ से आती गोलियों की बौछार पर पड़ गई और उसने तुरंत ऊदा देवी को गोलियों से छलनी कर दिया। जब नीचे गिरी लाश को देखा गया तो पता चला कि वह कोई महिला थी। जंग में ऊदा देवी की वीरता को देख कर अंग्रेज अधिकारी उनके प्रति नतमस्तक हो गए (गुप्ता, 2008, पृ. 201)। एक और बहादुर वीरांगना थीं, महावीरी देवी जो कि भंगी जाति से थीं। वे मुजफ्फरनगर के मूंडभर गांव की रहने वाली थीं।महावीरी देवी ने महिलाओं और बच्चों का एक संगठन बनाया था।जब मुजफ्फरनगर में ब्रिटिश हमला हुआ तो महावीरी देवी अपने संगठन की बाईस महिलाओं को लेकर युद्ध में सहभागिता हेतु निकल पड़ीं। युद्ध में सारी महिलाओं की मौत हो गई। मुजफ्फरनगर की ही आशा देवी गूजर को विद्रोह के जुर्म में फांसी दे दी गई (मिश्र, 2009)। दलित महिलाओं में वाल्मीकी देवी,रहीमी गुर्जर, भगवती देवी, कौशल देवी, हबीब गुर्जरी, सहेजा वाल्मीकि आदि अनगिनत दलित महिलाओं के योगदान को प्रकाश में लाया गया है। इनमें हिंदू–मुस्लिम दोनों ही महिलायें शामिल थीं। इसी दौर में बेगम हज़रत महल का नाम बहुत प्रमुखता से लिया जाता है। बेगम हजरत महल नवाब वाजिद अली शाह की बेगम थीं, जब वाजिद अलीशाह को अय्याश करार कर लखनऊ से कलकत्ता के मटिया बुर्ज भेज दिया गया ,तब बेगम हज़रत महल ने ही अपनी पूरी ताकत लगाकर ब्रिटिश आर्मी को लखनऊ पहुंचने से रोकने का प्रयास किया । अपने साध्य में उन्होंने अपने साधन की पवित्रता का भी पूरा खयाल रखा।जब अंग्रेजों के हमले से त्रस्त लोगों ने अंग्रेज बंदियों खासतौर पर महिला बंदियों की मांग की,ताकि अपने साथियों के साथ हुए दुर्व्यवहार का बदला उन बंदियों से लिया जा सके,तो रानी ने इसकी अनुमति नहीं दी।अपने जनानखाने में उन्होंने ब्रिटिश महिलाओं की सुरक्षा की। वे किसी भी स्थिति में किसी नारी का अपमान नहीं चाहती थीं। अंतिम सामर्थ्य तक उन्होंने सेना का संचालन करते हुए युद्ध किया और जब अपनी हार को पास पाया तो वे शरण के लिये नेपाल चली गईं। बेगम के नेपाल पहुंचने तक उनके पीछे आ रही ब्रिटिश सेना को रोकने रखने का काम किया तुलसीपुर की रानी राजेश्वरी ने। रानी राजेश्वरी के पति को पहले ही कैद किया जा चुका था। लड़ाई छिड़ने पर रानी ने अन्तिम सांस तक युद्ध लड़ा और आत्मसमर्पण नहीं किया। राजेश्वरी की वीरता ने ही बेगम को नेपाल तक पहुंचने का समय दिलाया। नेपाल में बेगम ने बहुत अभावों में अपना जीवन जिया पर आत्मसमर्पण या कोई समझौता नहीं किया। रानी राजेश्वरी उस युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुईं। इसी प्रकार नानासाहेब की बेटी मैनावती को भी ब्रिटिश शासन से माफी न मांगने पर जलती आग में फेंक दिया गया (मिश्र, 2009ए पृ। 257)। ऐसे ही अनेकों विद्रोह में शामिल महिलाओं के जिक्र ईस्ट ईंडिया कम्पनी के दस्तावेजों में मिलते हैं।

बेगमों ,दलित महिलाओं के साथ एक और तबका है ,जिसके संघर्षों का भी अविस्मरणीय इतिहास हमारे सामने मौजूद है।डॉ। लता सिंह अपने आलेख 'हाशिये का दृश्य में आनाः अठारह सौ सत्तावन का विद्रोह और तवायफें' में अजीजुन निसा नामक तवायफ के माध्यम से 1857की जंग में तवायफों की भागीदारी पर विस्तार से चर्चा करती हैं। वे बताती हैं कि अजीजुन के घर विद्रोहियों की बैठक हुआ करती थीं। अजीजुन ने औरतों का एक दल भी बनाया था। जो हथियारबंद सिपाहियों के साथ घूम–घूमकर युद्ध में घायल होने पर उनकी मरहम–पट्टी किया करता था और उनके बीच हथियार और गोला–बारूद बांटता था तवायफों का विद्रोहियों को शरण देना और उन्हें वित्तीय सहायता पहुंचाना, इतना जोर–शोर से जारी था कि ब्रिटिश हुक्मरानों को तवायफों की सम्पत्ति को जब्त कराना पड़ा ताकि वे किसी प्रकार के वित्तीय सहयोग की स्थिति में ना रहें। उनके घरों को लुटवा दिया गया (सिंह, 2009)। ब्रिटिश सैनिकों के बीच तेजी से फैल रहे यौन रोगों की जिम्मेदारी भी तवायफों पर डाल कर उन्हें यौन कर्मी की श्रेणी में खड़ा कर शहर से खदेड़ दिया गया।चौक बाजारों की उनकी पूरी संपत्ति छीन ली गयी। तवायफें शिक्षित और सम्पन्न होने के साथ–साथ राजनैतिक समझ का बेहतर ज्ञान भी रखती थीं। नवाबों से सत्ता हड़पने के लिए जिस तरह तवायफों को अपमानित कर उन्हें मुहरा बनाया गया, उसने उनकी सांस्कृतिक सत्ता और सम्मान को बहुत गहरी ठेस पहुंचाई और उनके भीतर इस

ब्रिटिश सत्ता के प्रति गहरे विरोध की भावना पैदा हो गई। तवायफों का यह विरोध स्वतंत्रता के राष्ट्रीय आंदोलन तक चला। इस आंदोलन में सहभागिता करने एवं आर्थिक सहयोग देने हेतु जब तवायफों ने गांधी जी से आग्रह किया तो उन्होंने तवायफों के नैतिक रूप से पतित होने की बात कह कर उनके इस आग्रह को ठुकरा दिया। जब तवायफों ने यह बात सुनी तो उन्हें बहुत दुख पहुंचा ।बहुत सारी तवायफों ने अपने नाचने गाने का काम बंद कर दिया। तमाम तवायफों ने अपने तानपुरे, तबले, सारंगी आदि बनारस में गंगा नदी में बहा दिए और अपने घर में चर्खा कातना शुरु किया (देवन, 2006)। यह निर्णय बहुत बड़ा था क्योंकि वे अपना आर्थिक आधार छोड़ रही थीं और उनके पास रोजी रोटी के दूसरे विकल्प नहीं थे। कई सारी तवायफों ने यह भी निर्णय लिया कि वे जब भी किसी महफिल में गाएगी, तो सिर्फ देशभक्ति के गीत ही गायेंगी, श्रंगारिक गीत नहीं। इस प्रकार उन्होंने आजादी की लड़ाई में अपनी भागीदारी दी।

गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की बड़ी संख्या में भागीदारी ने संविधान के भीतर स्त्री पुरुषों के बीच समानता का बड़ा आधार तैयार किया। कस्तूरबा, सरोजिनी नायडू, अरुणा आसफ अली, सरला देवी चौधरानी, दुर्गा भाभी, कमला देवी चट्टोपाध्याय, हंसा मेहता, दुर्गाबाई देशमुख, लाडो रानी जुत्शी, कमला नेहरु, अवंतिका बाई गोखले, पार्वती बाई आदि अनगिनत नाम महिलाओं की सहभागिता के बडे प्रमाण रहे हैं। गांधीवादी आंदोलन के अतिरिक्त हथियार बंद आंदोलन में भी भगत सिंह की भाभी दुर्गा भाभी, बीना दास, शांति घोष, सुनिति चौधरी, प्रीतिलता वाडेदार आदि की भागीदारी रही। इसी कडी में रानी झांसी रेजीमेन्ट की सिपाही और उनकी कमांडर कैप्टन लक्ष्मी का योगदान भुलाना असंभव है। सुभाष चन्द्र बोस द्वारा महिला सैनिकों का बनाया दल रानी झांसी रेजीमेंट देश से बाहर रहकर देश की ब्रिटिश हुकूमत से आजादी के लिए सक्रिय रहा।

गांधी के अहिंसक आन्दोलन या हथियार बंद आन्दोलन, की समर्थक महिलाओं की स्वतंत्रता आन्दोलन में भागीदारी इतनी आसान नहीं थी। घर से बाहर निकल कर धरनों में शामिल होना, सडकों पर नारे लगाना, जेल जाना, हथियार पहुंचाना, जंगलों में छिपाकर रहना उनकी पारंपरिक भूमिकाओं से बिल्कुल अलग था। पर्दे में रहने वाली महिलाएँ पर्दे से बाहर आ रही थी। राजनैतिक चेतना से लैस कुछ परिवारों को छोड दिया जाए, तो बाकि परिवार महिलाओं की भागीदारी को लेकर बहुत असमंजस में थे, या अपने परिवार की महिलाओं को राजनैतिक भूमिकाओं में स्वीकारना ही नहीं चाहते थे। मनमोहिनी सहगल ने जेल में उनकी मॉ के साथ बंद सत्याग्रही स्त्री की घटना को याद करते हुए बताया कि उस स्त्री के क्लर्क पति ने जब सुना कि उसकी पत्नी जेल में बंद है, तो उसने अपने पत्नी के पास संदेश भिजवाया कि अब उसे घर वापस लौटने की जरुरत नहीं हैं। उसका कहना था कि अब उसकी पत्नी ने जेल जाने से पूर्व उससे इजाजत नहीं मांगी थी। वह तब जेल गयी जब उसका पति ऑफिस में था (कुमार, 2009, पृ. 171)। उसी तरह कमला देवी चट्टोपाध्याय की सहेली के पति मिर्जा इस्माइल कमला देवी पर बहुत नाराज हुए। वे अपनी पत्नी की राजनीति सक्रियता को घर के लिए खतरा मान रहे थे। उनका मानना था कि कमला देवी के देश की आजादी और महिलाओं की आजादी के सवाल उनकी पत्नी को मनमाने व्यवहार हेतु प्रेरित कर रहे हैं। अतः कमला देवी को अब मिर्जा इस्माइल के घर नहीं आना चाहिए (कुमार, 2009)।

परिवारिक, सामाजिक दिक्कतों के बाद भी आजादी की लडाई में महिलाओं की सहभागिता कम नहीं हुई, बल्कि बढ़ती गयी। इस संदर्भ में उत्तर– पूर्व की रानी गिडयालू की बात किए बगैर महिलाओं की सहभागिता की बात अधूरी ही रहेगी। नागालैंड के उत्तरी कछार में रहने वाली रानी गिडयालू 13 वर्ष की आयु में ही स्वाधीनता संग्राम का हिस्सा बन गई। रानी गुडियालू के चचेरे भाई जोडयांग मणिपुर के ग्रामीणों को सत्याग्रह में शामिल करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। उन्हें गिरफ्तार कर फॉसी पर लटका दिया गया। जोडयांग की मौत के बाद गिडयालू ने आंदोलन अपने हाथ में ले लिया और "नो टैक्स" अभियान छेडा। इस पर अंग्रेजों ने उनके गांव के सारे हथियार जब्त कर सामूहिक जुर्माना लगा दिया। जिससे आंदोलन तेज हो गया। गिडयालू को बहुत श्रम के बाद पकडा गया और उन्हें गिरफ्तार कर जेल भेज दिया। उनकी मृत्यु भी गुमनामी में हुई। रानी गिडयालू आजादी की जंग में उत्तर–पूर्व की महिलाओं के सक्रिय सहभागिता की प्रतीक हैं। आजादी की जंग में बहन सत्यवती का जिक्र भी काफी रोचक और प्रभावशाली है। चन्द्रगुप्त विद्यालंकार रानी सत्यवती के संस्मरणों के माध्यम से आजादी की इन योद्धाओं के व्यक्तित्व की मजबूती और आजादी के अदम्य इच्छा शक्ति को भी बताते हैं। सन 1932के आंदोलन में अपनी 11 दिन की बच्ची को लेकर बहन सत्यवती जेल चली गईं ,जबकी उनका स्वास्थ्य इस बात की इजाजत उन्हें नहीं देता था। इस संतान का लालन–पालन जेल में ही हुआ। जेल से बाहर आकर भी वे जुनून की हद तक मजदूर, तांगेवालों, झिल्लीवालों को संगठित करने का काम करती थी। उन्हें अपने खाने–पीने तक की भी सुध नहीं रहती थी। पंद्रह वर्षो में बहन सत्यवती 11 बार जेल गईं । लाहौर जेल में उनके नेतृत्व में महिलाओं ने 9 अक्टूबर 1942 को ही जेल

के मुख्य फाटक पर तिरंगा फहरा दिया। इस घटना पर लाहौर में बंद तमाम लडकियों को बहुत ज्यादा हिंसा का सामना करना पडा। सत्यवती बहन को लाहौर से दूर अंबाला की सीलन भरी कोठरी की जेल में बंद कर दिया। जहॉ उन्हें तपेदिक हो गई। जब वे जेल में बंद थी, उनकी एक मात्र प्रिय पुत्री मुन्नी की मौत की सूचना उन्हें बहुत रहस्यमय तरीके से प्राप्त हुई, उस समय उनके स्वास्थ्य की हालत बेहद गम्भीर थी।बेटी के मौत के खबर सुन वे तडपती रही। वे उसे अंतिम समय में देख भी न सकीं। ना किसी परिवार वाले के साथ उसका शोक मना सकीं। लेकिन उनकी जीवटता कम नहीं हुई। वे बीमारी की हालत में भी जन–सभाओं को संबोधित करती रहीं ।बीमारी की हालत में ही उनकी 11वीं और अंतिम गिरफ्तारी हुई। उन्हें रेलवे स्टेशन पर गिरफ्तार कर स्ट्रेचर से सीधे अस्पताल ले जाया गया। कुछ ही दिनों बाद बीमारी के बहुत ज्यादा बढ़ जाने के कारण उनकी मृत्यु हो गयी (विद्यालंकार, 2006)।बहन सत्यवती तो एक उदाहरण है ऐसी तमाम महिलाओं का जिन्होंने अपना जीवन, अपना परिवार,अपने बच्चे सब इस आजादी के हवन में स्वाहा कर दिया तब जाकर हमें आजादी की सांस मिल पायी है। कितने लोगों का कर्ज है हमारे ऊपर और इस आजादी को संभालने की कितनी बडी जिम्मेदारी है, हमारे ऊपर । 1857से 1947तक के 90 वर्ष के इस लम्बे और सतत संघर्ष में खास से लेकर आम तक ढेरों महिलाओं ने अपनी कुर्बानी दी है। कुछ के नाम पता है, कुछ के नाम इतिहास में ही दफन हो गये या कर दिये गये।पर धीरे–धीरे इनके नाम सामने आने पर हमें स्वाधीनता आन्दोलन का एक अलग ही चेहरा देखने को मिल रहा है, जो देश की आजादी में संघर्षरत हाशिए के तबके के प्रयासों को जानने का और उन पर गर्व करने का मौक़ा हमें देता है। ये क्रांतिकारी आजादी के नींव के वे पत्थर हैं , जो कहीं अंधेरो में दबे तब हमें रोशनी के कंगूरे मिल पाए। जब भी हम आजादी के संघर्ष को याद करेंगे इन तमाम महिलाओं की बातें हमारे माथे को गौरव से ऊंचा कर देंगी।

सन्दर्भ

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार. (2006). शहीद बहन सत्यवती. सुधा सिंह जगदीश्वर चतुर्वेदी में, *स्वाधीनता संग्राम, हिन्दी प्रेस और स्त्री का वैकल्पिक क्षेत्र.* नई दिल्ली : अनामिका.

चारु गुप्ता. (2008). दलित वीरांगना एंड रिइनवेंशन ऑफ 1857. *1857 : एसेज फ्रॉम इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली* हैदराबादः ओरिएंट लोंग्मैन.

डॉ. लता सिंह, (2009) हाशिये का दृश्य में आना : सन 1857 का विद्रोह और तवायफें. रेखा अवस्थी मुरली मनोहर प्रसाद सिंह में, *1857 बगावत का दौर.* नई दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी.

राधा कुमार. (2009). *स्त्री संघर्ष का इतिहास.* नई दिल्ली : राजकमल.

वंदना मिश्र. (2009). महिलाओं की भूमिका. रेखा अवस्थी मुरली मनोहर प्रसाद सिंह में, *1857 बगावत के दौर का इतिहास.* नईदिल्ली : ग्रंथशिल्पी.

सबा देवन (निर्देशक). (2006). द *अदर सॉग* चलचित्र।

कविताएँ

शिव दत्त

मौन–विद्रोह

मेरा मौन

मेरे शोषण की स्वीकृति नहीं

मेरा मौन, मेरा प्रतिरोध है

उतना ही मुखर

जितना गाँधी का असहयोग

जितना अम्बेडकर का जाति–संघर्ष

इसी तरह, मेरा मौन भी मेरा संघर्ष है

जिसमें निष्क्रियता नहीं, निरंतरता है

मेरा मौन संतोष नहीं

मेरे मौन भीतरी विद्रोह है

क्योंकि मेरा मौन ही मेरा प्रतिरोध है.....।।

श्रीनारायण सिंह

हम् हो हम् हो

बहुदिनात् चिरकालात् न दृष्टा नहि मिलिता,
कुतः असि त्वं अहो! हं हो हं हो हं हो!
आगच्छ अत्र तिष्ठ, मम मनसि प्रतिष्ठ,
त्वं अहम् अहम् त्वं, परस्परमहो! हं हो!
नित्यं त्वां स्मरामि, नित्यं त्वां भजामि,
कुतस्त्वं नावगच्छामि, किं करोमि कुतः गच्छामि,
किञ्चिद् वदहि अरे अहो! हं हो हं हो हं
नयनयोः दृष्टिस्त्वम् अनुरागस्य सृष्टिस्त्वम्
वर्षायाः प्रथमा बिन्दु, नर्तयामि अहं अहो, हं हो।
न जानामि नावगच्छामि। किं करोमि कुतः मिलामि
कुतः असि प्रिये त्वं अहो! हं हो हं हो हं हो
आगच्छ मम निरूपमा अहमस्मि अत्र प्रियतमा!
किञ्चिद् वक्तुमिच्छामि श्रुयतामहो, हं हो २।
जनानां गतिं वदामि, किं भविष्यति चिन्तयामि।
पदं प्राप्त्वा अहंव्याधि, परेषां मानमर्दनम्,
भ्रातृभ्रातृव्यानांकृते अन्येषां अंशापहरणम्,
शोषणं–मोचनं चलति अत्र, सदा सर्वत्र अहो,
आगच्छ मे सर्वेश्वरी, कथं न वदसि त्वमं अहो।
गिरेः गुरुता गता, हर्षो पि न निरापदा
कुमनोविकारान्पश्य, आगच्छ आगच्छ,
निर्लज्जतायाः आवरणं, लज्जायाः तिरस्करणम्,
रोदिति भारती अत्र अहो, कुतः असि त्वं अहो,
अन्विष्यामि चिन्तयामि देवालये ग्रंथालये,
नीलालये हिमालये, नटालये चित्रालये,
अरूपात्वं आरूपात्वम्, सुरूपात्वं रूपे भव,
आगच्छ आगच्छ, आगच्छ अत्रैव वस,
खे त्वं क्षेत्रे त्वं उपत्यकां नेत्रे नेत्रे त्वम्,
आदर्शे, स्पर्शे, विमर्शे,त्वमेवत्वं त्वमेवत्वम्,
आगच्छ मम प्रियतमा! कुतस्त्वं कुतस्त्वम्,
सर्वशुक्ला चिन्तिता, श्रियः श्रीरपि अपहृता,
काली कथं न ग्रसति चिन्तयामि अहर्निशमहम्,
बहुदिनात् चिरकालात्, न पश्यामि अहं अहो,
आगच्छ मम प्रियतमा, कुतः असि त्वं अहो!
हं हो हं हो हं हो! हं हो हं हो हं ह!

कविताएँ

कृष्ण मोहन

वह सुरा फिर से पीऊँगा

मृदु हास्य से आकार पाते
ओठ उसके, खींच देते हैं प्रत्यंचा
एक अपरिचित सुख–धनुष के
हृदय के रिक्त नभ पर

दीप्ति आँखों की
आबद्ध कर लेती है मन को,
जैसे रेशमी केशों में
उलझी हों उँगलियाँ

अचानक, बात करते
जब ठहर जाती हैं आँखें
मेरे मुख पर, शीशा टूटता है,
कौंधता है प्रश्न मन में

वे आंखे देखती हैं क्या वही सब?
जो देखती हैं मेरी आँखें, उसके मुख पर
पुलक उठता है मन
उस मौन की भाषा समझकर

चला आता हूँ अपने ठाँव, यह आशा उठाए
फिर भेंट होगी, वह क्षण फिर जीऊँगा
भाव को निरपेक्ष रखकर नाम से,
वह सुरा फिर से पीऊँगा

उम्र भर जलता रहूँगा

दोपहर का स्वप्न जैसे,
जिंदगी में क्या नहीं था
पर सम्मोहक रंग
जैसा रात्रि के स्वप्न में है
वैसा कोई रंग न था

तुम्हारा मिलना, पास आना
भरने लगे थे
चटख–चमकीले रंग
दिखने लगा था लावण्य
खिलने लगा था वर्णिकाभंग

पर अचानक रूक गई,
क्यों तुम्हारी तूलिका
सिकुड़ गई क्यों उँगलियाँ
किस भय ने अक्रांत किया
जबकि कोई बात न थी

जो भी हो, प्रिये! ठन चुका है
तुम मिलो या न मिलो
रंग मैं स्वयं ही भरूँगा
सुगढ़–अनगढ़ सोच की बाती जलाकर
अपना दीपक स्वयं बनूँगा

लेकिन, मेरे प्रण की प्रेरणा हो
यादों से कैसे बचूँगा
जब भी तेरी बात होगी
एक मृदु पावक की लपटें घेर लेगी
उम्र भर जलता रहूँगा

कविताएँ

अरविन्द कुमार

मैं सांझ हूं

मैंने देखा है.....
हर रोज सूरज को ढलते हुए
आंगन में दियों को जलते हुए
हर दिन को जाते हुए
और हर रात को आते हुए

मैंने देखा है.....
दिनभर के उदास चेहरों को
कभी ना खत्म होने वाले समय के पहरे को
हर फूल को बंद होते हुए
हर पत्ती को मुड़कर सोते हुए

मैंने देखी है.....
हर शाम की ढलती किरन
आंसुओं से भीगे नयन
किसी को याद में तड़पते हुए
किसी अपने से बिछड़ते हुए

मैंने देखा है.....
सपनो को टूटते हुए
जिंदगी को रूठते हुए
समय को चलते हुए
दिन को रात में बदलते हुए
क्योंकि.....
मैं सांझ हूं।

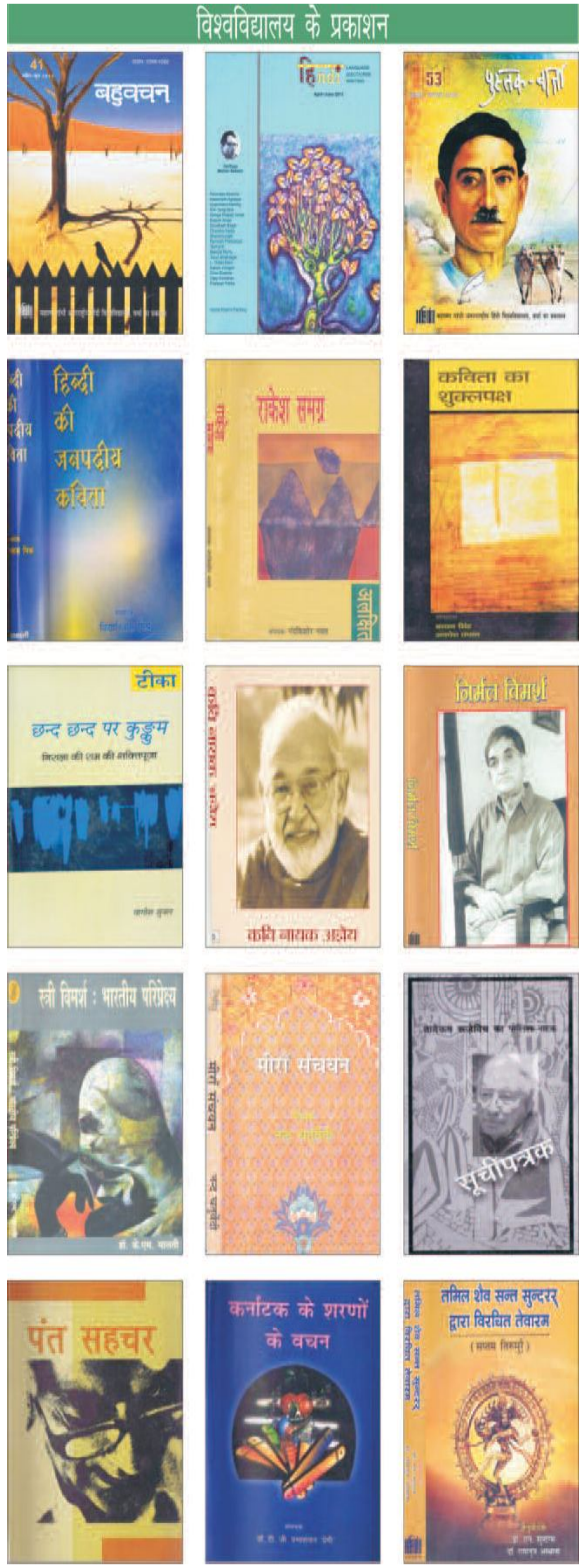

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक एक पूरा कैनवास खड़ा करती है

डी.एन. प्रसाद

सप्रसंग आ ही जाता है कि "खादी वस्त्र नहीं विचार है।" सही बात है, यह उक्ति कब, क्यों और किसके लिए कही गई, यह दम वाली बात नहीं है, परंतु वस्त्र की वैचारिकी पर विचार करने वाली है, क्योंकि रहन–सहन की संस्कृति में पहनावा व पोशाक की परम्परा पहचान तथा संस्कृति की विचारधारा की पहचान के लिए भी अक्षुण्ण है। वस्त्र (पहनावा) यह संकेत करता है कि वह किस पृष्ठभूमि और परिवेश की उपज है, उसमें वैचारिक प्रतिबद्धता क्या है? यथा सेना, पुलिस, नर्स, पादरी आदि–आदि यह संकेत है कि उक्त वर्दीधारी (वस्त्रधारी) की कार्यशैली और जीवनशैली क्या है? यह किसी को कहने की या बताने की जरूरत नहीं है।

खादी और गाँधी के अध्येता श्री पंकज कुमार सिंह ने अपनी प्रथम पुस्तिका 'खादी : एक विचार' में रामायणकालीन सीता के दशरथ के राजमहल में प्रवेश पर सीता द्वारा धारण किए रेशमी वस्त्र पर नजर दौड़ाई है, यहाँ तक कि अयोध्याकाण्ड में दासी के रेशमी वस्त्र की ओर ध्यान दिया है। यानी वस्त्र परिवेश का सूचक भी है, सम्पन्नता का बोध भी है। इस अर्थ–धर्म में वस्त्र की वैचारिकी स्पष्ट है। परिप्रेक्ष्य 'खादी वस्त्र नहीं विचार है' प्रासंगिक है।

खादी की वैचारिकी में सादगी, सच्चाई, स्वच्छता और निर्णय की स्वतंत्रता के साथ–साथ निर्भय मनस् की उपस्थिति भी है। परंतु काल के करवट लेने से संदर्भित अर्थ अनर्थक से हो गये हैं, खादी के साथ भी ऐसा ही हुआ है, आज के खादीधारी अनर्थक अर्थ से लबरेज हो गये हैं फिर भी लेखक पंकज की बेचैनी खादी और गाँधी के लिए बरकरार है अर्थात् एक दीपक जल तो रहा है.....

शरीर जिस तरह का वस्त्र धारण करता है, स्वभावतः भावना के सागर में एक तरंग उठती है, भले ही वह क्षणिक ही होती, उस क्षण बोध को जो बाँध लिया वह उस धारा में प्रवेशित हुआ और अन्य उसके विपरीत! फिर भी खादी की पहचान गाँधी काल और गाँधी के बाद भी एक अंतरराष्ट्रीय पहचान की पोशाक बन चुकी है, इसमें भ्रम नहीं है। पंकज ने अपनी छोटी–सी पुस्तिका में खादी के उद्‌भव और विकास के साथ–साथ परम्परा और परिवेश की प्रस्तुति दी है। खादी के वैदिककालीन बोध से लेकर उसकी ऐतिहासिक संदर्भ को वैचारिकी के साथ प्रस्तुत किया गया है। वैचारिकी का संदर्भ खादी के मूल्यबोध से भी है यथा "श्वेत रंग के खादी वस्त्र में सूर्य की किरणें शरीर तक पहुँचती हैं तो वे उत्तेजना के स्थान पर शांति प्रदान करती है। शांति उत्पादक कार्यों की ओर ले जाती है। यह दैवी–गुण शांति हमें सदा दूसरों को भला करने की प्रेरणा देती है, जो शक्ति शरीर–श्रम से अर्जित की जाती है अर्थात् उत्पादक–श्रम से बनती है। वही शक्ति मनुष्य को मानव बनाए रखने में सहायक होती है (पृ. 15)।" अर्थात् सादगी के साथ शरीर श्रम की महत्ता और परउपकार की अवदत्ता साथ–साथ है। खादी वस्त्र का वैचारिक संदर्भ इससे उजागर हो जाता है, परंतु आज के संदर्भ को न लें तो यह बोध सतत् शाश्वत बोध से सम्पूरित है।

खादी के न्यासिता दर्शन में स्वदेशी व स्वावलम्बन तथा शरीर श्रम की सार्थकता में सामाजिक समरसता की आर्थिक कहानी सकारात्मक होती है, गाँधी की वैचारिक बेचैनी भी यही थी जिस ओर पंकज ने दिशा–निर्देश देने की कोशिश की है। साथ ही खादी पर आगे के अध्ययन अनुसंधान के हेतु पुस्तक के अंत में खादी–संदर्भित पुस्तकों की एक वृहत्त–श्रृंखला भी प्रस्तुत है। अर्थात् खादी पर प्रस्तुत पुस्तक एक पूरा कैनवास खड़ा करती है। खादी का शाब्दिक अर्थ और उत्पति अर्थ या उत्पादित अर्थ क्या है, मेरी जिज्ञासा थी परंतु नहीं मिला। अलबत्ता, लेखक पंकज ने 'खादी' को पर्सियन शब्द बताया है जिसका अर्थ 'सौभाग्यम' है। पंकज सौभाग्यशाली हैं और खादी वस्त्र धारण करने वाले भी सौभाग्यशाली हैं, कलिकाल में भी। अस्तु पुस्तिका खादी सफ़र की अनथक कहानी कहती है जो स्तुत्य है।

पुस्तक का नाम : खादी : एक विचार
लेखक का नाम : पंकज कुमार सिंह
प्रकाशक : काशी योग एवं मूल्य शिक्षा संस्था, वाराणसी
प्रथम संस्करण : सितंबर, 2016
मूल्य : 60/– रुपये
पृष्ठ : 67

पुस्तक समीक्षा

साँस-साँस जिन्दगी

दिनन–दिनन के फेर – लीलाधर मंडलोई (तिथि हीन डायरी)

लक्ष्मी पाण्डेय

मंडलोई जी की इस तिथिहीन लेकिन तथ्यपूर्ण डायरी को मैंने यही नाम दिया है 'साँस–साँस जिन्दगी'। कारण यह कि जिस भाव प्रवण भाषा शैली में नर्मो–नाजुक अहसासों के साथ स्मृतियों के रेले–मेले में वे पाठकों को ले जाते हैं वे साँस–साँस गुजरती जिन्दगी के चित्रों की नुमाइश को देखते चले जाने का सा मर्मस्पर्शी अनुभव है जबकि लोक से उठाई गई यह उक्ति 'दिनन–दिनन के फेर' में जो 'फेर' शब्द है वह व्यक्तित्व, समाज, राष्ट्र के काया पलट या तख्तापलट जैसे गूढ़–गंभीर परिवर्तन को दर्शाकर ही सार्थक होने की प्रतीति करता है। इस डायरी में 'फेर' शब्द वाली मार्मिक गूढ़ता अनुपस्थित है बल्कि उन स्वाभाविक परिवर्तन चक्रों की बात है जो मनुष्य के जीवन में घटते ही हैं। जैसे– शिक्षा और धनोपार्जन के लिए जन्म स्थान, गाँव– घर छोड़–कर शहर चले जाना, विकास की प्रक्रिया में शिक्षा, व्यावहारिक ज्ञान, अनुभवों तथा धन–साधन सम्पन्नता से जैसे हमारा अंतर्बाह्य बदलता है वैसे ही हमारा छोड़ आया हुआ स्थान, परिवेश भी विकास की प्रक्रिया से अछूता नहीं रहता कमोबेश बदलता ही है और बदलना भी चाहिए। माता–पिता, बंधु मित्रों का अचानक या धीरे–धीरे हमसे और संसार से दूर चले जाना..... यहाँ कौन और क्या शाश्वत है ? उस विराट के आकाशीय आच्छादन के अतिरिक्त इस सृष्टि में क्या और कौन नित्य है ? कोई नहीं ..... इस अनित्यता और नश्वरता के चक्र के चलते हम भी माता–पिता की भूमिका में आ जाते हैं फिर उन्हीं सपनों और महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति की लालसा में बच्चे हमसे दूर चले जाते हैं जैसे कभी हम आए थे ..... फिर वही एकाकीपन ..... जिसे भोगने के लिए हर मनुष्य अभिशप्त है। विवेक और दृष्टिकोण के अंतर से यह किसी के लिए दुर्भाग्य है और किसी के लिए सौभाग्य और वरदान ..... जीवन का यह चक्र स्वाभाविक गति से चलते हुए ही प्रेम करने, घृणा, मित्रता, आसक्ति–विरक्ति के लिए अवकाश उपलब्ध कराता है। मंडलोई जी की डायरी इस साँस–साँस बहती जिन्दगी का प्रमाण है इसमें अस्वाभाविक कुछ नहीं ..... जिसे गहरी आह भरकर 'दिनन का फेर' कहें। डायरी के प्रथम फ्लैप पर प्रभु जोशी संकेत देते हैं कि – ''मंडलोई के इस लिखे धरे में ढेरों अल्पाक्षरा, लेकिन अर्थ बहुला पंक्तियाँ हैं। जिनके बीच हमें ऐसी बहुतेरी छूटी हुई जगहें बा – आसानी बरामद हो जाती हैं जहाँ डायरी लेखन की अचूक निस्संगता और किसी एक प्रिय को सम्बोधित पत्र–लेखन की अलभ्य अन्तरंगता एक–दूसरे में एकमेक हो जाती है।'' यह पूरी डायरी की सुन्दर, सुगठित समीक्षा है। 'बा–आसान बरामद हो जाने वाली छूटी जगहें' डायरी की आरंभिक और (मेरी बुद्धि के अनुसार) अटपटी कविता में ही बरामद हो जाती हैं तथा किसी प्रिय को सम्बोधित, प्रेमिल स्मृतियों में पगी गद्यात्मक कविताएँ और कविता जैसे गद्यांश डायरी के अंतिम यानि छठे खण्ड 'यमुना के पुलिन पर' में अत्यन्त मर्मस्पर्शी, सुन्दर सपनों सी कोमलता और मिठास लिए अभिव्यक्त हुए हैं। अब कविता के अटपटी होने की व्याख्या करने के लिए इसे उद्धृत करना आवश्यक है – ''इस गद्य को पढ़ो यह अलिखा है। लेकिन खिला/ इसके भीतर खुलने से जो छूटा है उसे अवकाश में पढ़ो / रोशनाई यहाँ गुप्त लिपि है। जो यहाँ है वही है मेरा लिखा हुआ/ और उसे पढ़ने के लिए चाहिए एक गरीब की आत्मा/ जिसे लिखते हैं वही लेखक/ जिन्हें लेखक की तरह नहीं जानते लोग। क्या आप मुझे जानते हैं ?'' चूंकि यह कविता डायरी के संदर्भ में है इसलिए इसे डायरी और लेखक के जीवन के संदर्भ में ही पढ़ा–समझा जाना चाहिये।

क्या आप मुझे जानते हैं ? लिखकर मंडलोई जी ने यह स्पष्ट कर दिया कि मैं ही वह लेखक हूँ जिसने गुप्त लिपि में यह अलिखा गद्य लिखा है और जिसे लोग लेखक की तरह नहीं जानते। भीतर खुलने से जो छूटा है वह जीवन के आरंभिक दौर के अभाव, पीड़ा, अतृप्ति के दंश हो सकते हैं जिन्हें पढ़ने के लिए (सहृदय नहीं) गरीब की आत्मा ही चाहिए ..... ऐसा शायद इसलिए क्योंकि अभावों, संघर्षों से थकी, पीड़ा से सदा लबरेज, रहने वाली गरीब की आत्मा ही इस गुप्तलिपि के पीछे बहती पीड़ा की नदी की सहगामिनी हो सकती है। किंतु यदि गरीब जो केवल रोटी ही पढ़ता–लिखता है उसका इतना बौद्धिक परिष्कार न हो कि वह 'छूटे हुए को' अवकाश में पढ़ सके ..... तब ? यह संभव भी है ..... केवल धन से गरीब नहीं, बड़े समृद्ध लोग संवेदना के स्तर पर अत्यन्त गरीब होते हैं उनकी बुद्धि भी इस 'छूटे हुए' को नहीं पढ़ पाएगी – इसके लिए काव्यशास्त्र ने 'सहृदय अर्थात् हृदयसहित, संवेदनाओं से परिपूर्ण हृदय की

व्यवस्था दी है।' गरीब की आत्मा पद उपयुक्त नहीं लगता ..... फिर जो खिल गया वह अलिखा कहाँ रहा ? खिलना एक सकारात्मक क्रिया है। खिलना यानि स्वयमेव लिख जाना .....। 'छूटे हुए को' तथा 'गरीब की आत्मा' ऐसे पद हैं जिनसे मैंने अनुमान लगाया कि 'छूटा हुआ' वह .....। अभाव, पीड़ा, संघर्ष, विपन्नता का ही द्योतक होगा तभी तो इस स्थिति को समझने की सामर्थ्य गरीब में ही होगी ऐसा मानता है लेखक .....। अब यह समय कौन सा रहा होगा ? स्वतंत्रता के पूर्व और पश्चात् के लगभग दस वर्ष भारतीय समाज–बँटवारे की पीड़ा और नये स्वतंत्र भारत की शासन व्यवस्था के कारण अर्थाभाव का सामना करता रहा। तब तकनीकी, बाजारवाद, व्यापक शिक्षा, भौतिक संसाधनों की भरमार नहीं थी ..... थोड़ी सी आवश्यकताएँ थी, मुट्ठी भर सपने थे ..... अधिकांश लोगों की स्थिति एक समान होने के कारण आज जैसी शिकायतें नहीं थीं .....

डायरी के अंतिम फ्लैप में मंडलोई जी का जीवन परिचय दिया है। अगर इसमें जन्म का वर्ष और तिथि दी होती तो हम उनके अभावग्रस्त दिनों का सहज अनुमान लगा पाते ..... मंडलोई जी ने 'जन्म तिथि और वर्ष अज्ञात' लिखा है। यह डायरी विधा के साथ और पाठकों के साथ एक तरह का छल है। क्योंकि इसी परिचय में आगे उनकी योग्यताएँ दर्ज हैं – पत्रकारिता में स्नातक, दूरदर्शन के महानिदेशक, प्रसारण में सी।आर।टी। लंदन से ..... आदि। हर शिक्षित व्यक्ति यह जानता है कि बिना जन्मतिथि के (हाईस्कूल की अंकसूची) अगली कक्षाओं में क्या किसी भी कक्षा में प्रवेश नहीं मिलता। परतंत्र भारतीय समाज में भी जन्म तिथि अवसर पर लिख लेने की बुद्धि नहीं थी अतः अधिकांश लोग अनुमानित तिथि और वर्ष शाला में लिखवाते थे जो पर्याप्त था। कोई विवाह जैसा धार्मिक कृत्य तो है नहीं कि ग्रह–नक्षत्रों का प्रभाव कुंडली पर और उससे विवाहित जीवनों पर पड़ेगा। बिना जन्म प्रमाणपत्र के, जन्मतिथि के मंडलोई जी भारत से लंदन तक पढ़ कर आ गए..... उच्च पदों पर पदस्थ थे, अब भी हैं..... क्या उनकी डिग्रियाँ, जन्म तिथि अज्ञात होने का बयान, गरीबी के वो दिन विचारणीय नहीं लगते ? ऐसे कितने गरीबों को लंदन तक पढ़ने जाने का सौभाग्य मिलता है ?

प्रथम खण्ड में दो विचित्र बयान हैं। प्रथम – ''मेरी पुकार को सिर्फ बर्बर और शैतान ही समझते हैं – उन्हें जानते हुए मैं नहीं पुकारता प्रधानमंत्री को।'' यहाँ प्रधानमंत्री शब्द को विशेष रूप से रखने से पढ़ते हुए कुछ कर्कश जैसी अनुभूति होती है..... राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं से उपजा अंसतोष या राजनैतिक चोट ही इसके मूल में हो सकती है। द्वितीय– '' मैं कविता से अधिक सृष्टि की अमरता के लिए लिखना चाहता हूँ।'' बंधु, न कवि अमर है न कविता अमर है, न सृष्टि..... सब नश्वर हैं..... सब जानते है फिर यह आत्म–रति, आत्म–छलना क्यों ? सृष्टि के रहते मानवता जीवित रहे..... यही सबसे बड़ा प्रयास होना चाहिए .....

मंडलोई जी यह कर सकते हैं मनुष्यता की रक्षा के लिए लेखन ..... क्योंकि वे अपनी कमजोरियों, दुर्बलताओं को मुक्त कंठ से स्वीकारते हैं– ''मुझे लगता है मैं एक बदतमीज दुनिया का बाशिन्दा हूँ। मैं पश्चिम की सिम्त अधिक खिसका हूँ और अपनी तहजीब कहीं गिरवी छोड़ आया हूँ। मैं दिल पर हाथ रख कर कोई बयान देने से कतराता हूँ ..... मैं एक भटका हुआ मुसाफिर हूँ और लौट जाने से कतराता हूँ।'' (पृ। 22) पाँचवें खण्ड– 'लोग दुनिया में' में लेखक अपने दरम्याने कद में स्वयं को खोजता हुआ कहता है – 'तुम वो नहीं हो भाई', 'वो मिल जाए हमें तो कैसा हो' – वो जिसे चाय की गुमठियों और पान के ठेलों से लड़ने की तरकीबें मिलीं ..... जो जन–सामान्य के बीच धरती पर पाँव टिकाए खड़ा है ..... लेखक को आशा है कि आदम के उस बेटे के मिल जाने पर संसार बदलेगा कल्पना से सुन्दर इन पंक्तियों के लिए लेखक प्रशंसा का पात्र सहज ही बन जाता है –'' उसके आने से उतरेगी बारिश सूखे दरख्तों पर/ वहाँ धूप उतरेगी, उतरेंगे उम्मीदों के परिन्दे।''

प्रथम खण्ड 'पुरखों से नाता' में अंतर्मन रूपी डार्करूम में पुरखों की स्मृतियों, नसीहतों, सीखों की झकझोरने वाली ठक–ठक है। द्वितीय खण्ड 'सूर्य के हमजोली' में सतपुड़ा की पहाड़ियों के बीच छिंदवाड़ा नामक स्थान में आदिवासियों के बीच बिताए बचपन का चित्रण है। यहीं लेखक ने आपसी सौहार्द, एकता, मिले –जुले उत्सव–त्यौहार, ऋतुओं का, प्रकृति का सौंदर्य जाना, अनुभव किया जिसका विस्तार अगले खण्ड पेड़ और पक्षी तक है। प्रकृति के बीच घूमते–जीते हुए तब लेखक ने 'अमर घर चल' का पाठ पढ़ा था अब तकनीकी, बाजारवाद से ओतप्रोत पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाववश बच्चे घर पर ही रहते और खेलते हैं प्रकृति को नहीं जानते–पहचानत..... यह विडंबना दुखद है। चतुर्थ खण्ड–'माँ और पास–पड़ोस' में लेखक एकल परिवारों के कारण प्राप्त एकाकीपन, रिश्तेदारों के आने से उत्पन्न अव्यवस्था के आनंद का अभाव, व्यवस्था की जड़ता, समाज की संवेदनहीनता से भयभीत माँ जो 35 वर्षों का वैधव्य तथा असुरक्षा का भय झेलते इतनी कातर हो उठी है कि उसकी प्रार्थनाएँ भी भय से भरी होती हैं, की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति करता है।

डायरी लेखक की निजी वस्तु होती है। यह नितान्त निजी लेखन की विधा है, जिस पर शास्त्र का अनुशासन लागू नहीं होता। यह पारदर्शिता, ईमानदार अभिव्यक्ति की माँग करती है। दिनकर, इलाचंद्र जोशी, धीरेन्द्र वर्मा, शमशेर बहादुर सिंह आदि अनेक लेखकों ने सार्थक डायरियाँ लिखीं।

महात्मा गांधी तो डायरी लेखन को अनिवार्य मानकर इसका व्रत की तरह पालन करने की शिक्षा देते थे। डायरी लेखन में स्वयं को उद्घाटित करते हुए विरेचन की वह प्रक्रिया भी सम्पन्न हो जाती है जिससे हम स्वयं को पा सकते हैं, निर्मल मन–प्राण उस विराट की निकटता को प्राप्त कर सकते हैं। एक शेर याद आता है –

''न बचा बचा के तू रख इसे, तेरा आइना है वो आइना
कि शिकस्त हो तो अजीजतर है निगाहे आइना साज मे.....''

पारदर्शी, निश्छल, निष्कपट, बेलाग अभिव्यक्ति ही डायरी की सार्थकता का पैमाना है। इसमें आत्म–केन्द्रित ही नहीं समाज केन्द्रित चिन्तन भी हो सकता है। मंडलोई जी के चिन्तन का विस्तार साहित्य, समाज, भाषा तक है। उनकी कुछ सार्थक पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं। जैसे – ''अमर विचार के लिए किसी भाषा को चुनना है तो वह बिलकुल अपनी हो। समूची आत्मा के साथ।'' – '' एक आम आदमी की पुकार का अब कोई अर्थ नहीं। तब भी एक आम आदमी ही पुकारता है सवाल खड़ा करता हुआ.....'' ''हमें सात समन्दर पार की उड़ान तब भरनी चाहिए जब हम अपनी धरती के यथार्थ को अपनी समझ भर जान लें।''
–''अगर मेरी कविता में दुख है। और सबका नहीं। मेरे लिखे को आग लगे।'' काव्य में लोकमंगल का भाव निहित होना आवश्यक मानते हैं मंडलोई जी।– '' जब आदमी उच्च शिक्षित होकर माया–मोह से बेपरवाह हो जाए तो सरकारें तक चिंतित हो जाती हैं।'' – ''दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यकों को लालच और उपहार देकर जरखरीद गुलाम और बौना बना दिया है। अब सरकार की कुर्सी के पीछे बौनों की जमात है।'' बहुत खूब ..... भई वाह .....। मंडलोई जी पूछते हैं – '' क्या मेरे लिखे में रंग आ सकते हैं ?'' मैं कहती हूँ –'' आपके लिखे से रंग आ सकते हैं'' यह बदरंग होता यांत्रिक संसार जब रंगीन हो जाएगा संवेदनाओं के लाल–गुलाबी–पीले–हरे रंगों से ..... तो आपके लिखे में पुनः रंग आ जाएँगे ..... 'हम और तुम' से 'हम तुम' बनकर लोग घरों को लौटेंगे ..... रूह के अंधेरों की यातना और साँसों की गोधुलि पर आपका चिरकाम्य वसंत छा जाएगा जिसके फूल असली होंगे, प्लास्टिक के नहीं .....

अपनी रचना से असंतुष्ट रहना रचनाकार की लेखनी को जीवंत और सक्रिय बनाए रखता है। मंडलोई जी की अंसतुष्टि भी इस बात का संकेत है कि पाठकों को इस डायरी के अगले भाग, नए काव्य–कथा संग्रह पढ़ने को मिलते रहेंगे। इस काव्यमयी डायरी की भाषा सरस और भाव प्रवण है। भाषा वैविध्य ध्यान आकर्षित करता है जैसे एक ही पृष्ठ पर वापरना, अबेरना, तईं जैसे शब्द .....।। कहीं शब्द प्रयोग में चूक भी अस्वाभाविक लगती है जैसे पृ. 15 पर हवा का चूम जाना कि जगह यदि 'सहला जाता' होता तो उस परिस्थिति में उचित होता। 'मद्यपान का सेवन' पान और सेवन पुनरूक्ति दोष है। 'हमजुल्फ' का अर्थ साढ़ू भाई होता है संभवतः, यानि दो बहनों के पति आपस में हमजुल्फ होते हैं अतः यहाँ जिस अर्थ में प्रयोग है वह क्यों है, नहीं समझ पाई .....।

बहरहाल डायरी रोचक, प्रेरक और पठनीय है। स्मृतियाँ चाहे सुख के क्षणों की ही क्यों न हों – दुख ही देती हैं ऐसा अनुभूत सत्य है सबके लिए ..... सब जगह ..... किंतु काव्यशास्त्र में दुखान्त भी सुख की ही अनुभूति कराता है तभी तो हम दशरथ मरण के प्रसंग को पढ़ते हुए (रामचरित मानस में) रोते हैं किंतु बार–बार उसे पढ़ना चाहते हैं। मंडलोई जी की डायरी भी ऐसी ही स्मृतियों की पोटली है ..... जिसे पृष्ठ दर पृष्ठ खोलते–पढ़ते जाओ। इसी में लेखक की समृद्ध, विकास यात्रा के बीज छिपे–दबे हैं। जिसकी गवाही प्रभु जोशी की यह पंक्तियाँ देती हैं – ''संवेदनशीलता ने मंडलोई को दारूण अंधनियति के दग्ध मुहाने से निकालकर फिर जीवन के हरहराते सिरे पर लाकर खड़ा किया।'' मंडलोई जी की विकास यात्रा, रचना और जीवन दोनों में निंरतर बनी रहे .....
शुभकामनाएँ..... बधाई .....।

रचनाकार

चाओ वाई	chao_wei@qq.com
मनीष कुमार जैसल	mjaisal2@gmail.com
अनिर्बाण घोष	anichinese@gmail.com
अभिषेक त्रिपाठी	abhisheksocio1991@gmail.com
अवन्तिका शुक्ला	avifem@gmail.com
शिव दत्त	shivdutt041@gmail.com
श्रीनारायण सिंह	srinarayan68@gmail.com
कृष्ण मोहन	krishnamohan.lal@gmail.com
अरविन्द कुमार	arvind.mrt1@gmail.com
डॉ. डी.एन. प्रसाद	dnpsayal@yahoo.co.in
लक्ष्मी पाण्डेय	shreesuryam@gmail.com

संपादकीय

gcpandey@gmail.com

shambhujoshi@gmail.com

निमित्त पत्रिका के प्रति आपके स्नेह के लिए बहुत–बहुत धन्यवाद। विश्वविद्यालय परिसर की रचनात्मक अभिव्यक्ति के इस समवेत प्रयास में आपका योगदान इस पत्रिका को निरंतर प्राप्त होता रहेगा, ऐसी आशा है।
शुभकामनाओं सहित।